RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-10
October-2018
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

पंचायती राज एवं महिला नेतृत्व विकास–एक विमर्श

डॉ० राजेश कुमार

पी.एच.डी.,(जे.आर.एफ.), राजनीति विज्ञान विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी–221005, भारत

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 10 October 2018

Keywords
पंचायती राज, महिला सशक्तीकरण, नेतृत्व विकास, राजनीतिक प्रतिनिधित्व व सहभागिता, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण, सामाजिक परिवर्तन, निर्णय-निर्माण एवं क्रियान्वयन।

*Corresponding Author
Email: drrajesh.mcprbhu[at]gmail.com

ABSTRACT

"पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व विकास वर्तमान भारत का एक बेहद जरूरी विमर्श है। चूँकि यह महिला स्वतन्त्रता, समानता, मजबूती और महत्ता की हिमायत करता है, इसलिए इसे सम्पूर्ण मानव समाज के आधे हिस्से की बेहतरी से जुड़ा विमर्श कहा जा सकता है। इस बेहतरी की स्थापना हेतु भारत में स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की विकेन्द्रीकृत प्रणाली प्रारम्भ की गयी। यह विकेन्द्रीकरण जमीनी स्तर पर हुआ है तथा इन संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक–तिहाई स्थान आरक्षित (वर्तमान में कई राज्यों में 50 प्रतिशत) किये जाने से जमीनी स्तर पर काफी बदलाव हुए हैं। आज भारत में 12 लाख से अधिक महिला निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जो दुनिया के किसी भी देश में नहीं हैं। इतना ही नहीं अगर पूरी दुनिया के निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की संख्या जोड़ी जाय तो वह संख्या इन भारतीय निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों से कम ही है। देखा जाय तो पंचायतों में महिला नेतृत्व विकास एक ऐसी मौन क्रांति का द्योतक है जो अभी राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक रूप से भले ही दिखाई नहीं दे रही हो पर उसकी धीमी आँच भारतीय लोकतंत्र को अवश्य मजबूत बना रही है। यह क्रांति देश के सत्ता–विमर्श के ढाँचे में ही बदलाव नहीं ला रही है बल्कि पंचायत स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ने स्थानीय स्तर पर सामुदायिक जीवन और उसकी चेतना तथा संस्कृति में भी परिवर्तन लाया है। इन निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों ने सत्ता के जातीय समीकरण को ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समीकरण को भी बदला है। ग्राम सभा से लेकर संसद तक राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की भागीदारी दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। अब स्थिति यह है कि पंचायतों में भागीदारी होने के साथ ही उनकी आत्मनिर्भरता भी बढ़ी है। उनमें जागरूकता भी आयी है और वे छोटे–छोटे स्वयं सहायता समूहों के जरिये अपना स्वरोजगार अपना रही हैं और देश के राष्ट्रीय विकास में अपना सहयोग भी दे रही हैं। इस तरह यह कहना गलत नहीं होगा कि पंचायतों से ही महिलाओं के राजनीतिक एवं सशक्तीकरण अभियान को गति मिली है। जब पंचायतों में उनकी भागीदारी बढ़ी तभी वे हर दिशा में आगे निकल पायी हैं। अब तो संसद तक में उन्हें आरक्षण देकर उनके नेतृत्व विकास को प्रोत्साहित किया जा रहा है।"

विषय–प्रवेश

14–15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को भारत में एक लम्बे संघर्ष के बाद स्वतन्त्रता का अरूणोदय हुआ। राष्ट्र ने महात्मा गॉधी के नेतृत्व में अहिंसक संघर्ष के माध्यम से जो स्वतन्त्रता प्राप्त की वह मानव जाति के इतिहास में एक अद्भुत घटना थी। क्योंकि भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन एक आंदोलन होने के साथ–साथ राष्ट्र के लाखों लोगों की सामाजिक–आर्थिक मुक्ति का परिचायक भी था। स्वतन्त्रता आंदोलन का एक मात्र उद्देश्य दासता की बेड़ियों को उतार फेंकना ही नहीं था अपितु स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किये गये इस ंसघर्ष में यह दृढ़ विश्वास अन्तर्निहित था कि राजनीतिक रूप से स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ–साथ जनता की सामाजिक आर्थिक स्वतन्त्रता के बेहतर प्रयास किये जायेंगे। स्वतन्त्रता के इस पावन अवसर पर संविधान सभा के समक्ष भाषण देते हुए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था :–''वर्षों पूर्व हमने नियति के साथ एक प्रतिज्ञा की थी और वह समय आ गया है जबकि हम उस प्रतिज्ञा को सर्वांश में तो नहीं लेकिन अधिकांश में पूरा करेंगे। ठीक आधी रात के समय जबकि सारा संसार निद्रामय है, भारत के जीवन तथा स्वतन्त्रता का स्वर्णविहान होगा। इतिहास में कभी कभार ही वह क्षण आता है, जब हम पुरातन युग से नूतन युग में प्रवेश करते हैं, जब एक युग का अन्त हो जाता है और जब दीर्घकाल से सोई हुई राष्ट्र की आत्मा जग उठती है। यह उचित ही है कि इस गम्भीर अवसर पर प्रतिज्ञा करें कि हम भारत की, उसके नागरिकों की और इससे भी अधिक मानवता की सेवा करेंगे।''

इस प्रकार 15 अगस्त. 1947 को भारतीय इतिहास में नवीन युग का सूत्रपात हुआ। लगभग 200 वर्षों की दासता की विमुक्ति के बाद भारतीय जनमानस ने स्वतन्त्रता एक अनिर्वचनीय प्रसन्नता में राहत की सांस ली। 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान निर्माताओं द्वारा जिस जनतांत्रिक प्रणाली की नींव रखी गयी उससे भारतीय जनता की आशाओं व अपेक्षाओं में निरन्तर प्रगति महसूस की गयी। दूसरी तरफ कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के उत्तरोत्तर विकास के चलते शासन भी शीघ्रातिशीघ्र जनता की आशाओं व अपेक्षाओं पर खरा उतरना चाहता था जिससे जनता को भी यह महसूस हो सके कि भारत में सही अर्थों में जनता का शासन मौजूद है। देश का कोई भी नागरिक ऊपर से लेकर नीचे तक किसी भी राजनीतिक प्रणाली में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकता है। इसे स्पष्ट करते हुए पं0 नेहरू ने संविधान सभा के समक्ष कहा था कि :–'' इस संविधान सभा का सर्वप्रथम कार्य भारत को नये संविधान के माध्यम से स्वतन्त्रता प्रदान करना, भूख से पीड़ित लोगों को भोजन देना, वस्त्रहीन लोगों को वस्त्र देना तथा प्रत्येक भारतीय को उसकी क्षमता के अनुसार उन्नति करने हेतु अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना है। इस समय भारत का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि गरीब और भूख से पीड़ित लोगों की समस्या को कैसे हल किया जाय। हम जहाँ कहीं भी जाते हैं हमें इस समस्या का सामना करना पड़ता है। यदि हम इस समस्या को शीघ्र हल नहीं कर सके तो हमारा कागजी संविधान अनुपयोगी और निरर्थक हो जायेगा।''[1]

जब हम अपने अतीत पर नजर डालते हैं तो पाते हैं कि भारत में गार्गी और मैत्रेयी जैसी प्रसिद्ध महिला दार्शनिक थीं जो पुरूषों के स्तर पर ही भाषण–प्रवचन तथा बहस–मुवाहिसों में हिस्सा लिया करती थीं। हमारे स्वाधीनता आंदोलन में भी महिलाओं का योगदान पुरूषों से थोड़ा भी कम नहीं था। स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ने के महात्मा गाँधी के आह्वान पर ऐसे समय में महिलाओं ने उसमें हिस्सा लिया जब सिर्फ 2.0 प्रतिशत महिलाएँ ही शिक्षित थीं। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि महिलाओं के लिए घर से बाहर निकलना कितना कठिन था, परन्तु तब भी वे बाहर निकलीं। आजादी के बाद भी संविधान सभा के सदस्य के रूप में महिलाओं ने स्वतन्त्र भारत के लिये संविधान का मसौदा तैयार करने के

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

काम में हिस्सा लिया। यह गर्व की बात है कि डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के प्रस्ताव पर संविधान ने शुरू से ही महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिया, जिससे ऐसी व्यवस्था वाले चुनिंदा देशों की श्रेणी में भारत भी शामिल हो गया। इसके अलावा एक लंबी लड़ाई के बाद 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से उन्हें एक तिहाई आरक्षण की भी व्यवस्था (वर्तमान में कुछ राज्यों में 50 प्रतिशत) कर दी गयी, किन्तु इन सबके बावजूद क्या सही अर्थों में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो पाया है ?

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के लिए यह आवश्यक है कि लोकतंत्र को एक व्यापक भागीदारी वाली प्रक्रिया के रूप में देखा जाय, जिसमें ग्रासरूट स्तर पर आम आदमी व नागरिक खुद अपने, समुदाय और अपने काम को प्रभावित करने वाले फैसलों में सीधे भाग लें।[2] यह स्थानीय स्तर पर नागरिकों के सशक्तिकरण और सेवाओं के वितरण में उनकी भागीदारी चाहता है। ज्यांद्रेज और अमर्त्य सेन मानते हैं कि स्थानीय लोकतंत्र के अभ्यास को भी, जो व्यापक राजनीतिक शिक्षा का रूप है, गाँव की राजनीति के संदर्भ में लोग संगठित होना, अपने अधिकारों की माँग करना, भ्रष्टाचार का विरोध करना और सबसे बढ़कर शासन में स्थानीय स्तर पर निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया के संदर्भ में भागीदारी सुनिश्चित होती है। सीखने की यह प्रक्रिया न केवल स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को सशक्त बताता है बल्कि सामान्य राजनीतिक भागीदारी के लिए उनकी तैयारियों को भी बढ़ाता है। आम आदमी ही लोकतंत्र की जड़ है तथा उनकी भागीदारी सरकार को बैधता प्रदान करती है। उसमें भी महिलाओं की भागीदारी लोकतंत्र को और अधिक समावेशी बनाती है, क्योंकि जब तक दुनिया की आधी आबादी को शासन तथा निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में ज्यादा से ज्यादा भागीदार नहीं बनाया जायेगा महिलाओं की स्थिति नहीं बदली जा सकेगी। हालाँकि नागरिक के रूप में अपने स्वयं के हितों और अधिकारों को पाने के लिए महिलाओं द्वारा अनौपचारिक राजनीतिक गतिविधियों की तेजी से वृद्धि होना स्वीकारता है, किन्तु औपचारिक राजनीतिक ढाँचे में उनकी भूमिका लगभग अपरिवर्तित बनी हुई है। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के मुद्दे ने 1995 में बीजिंग में आयोजित महिलाओं पर चौथे विश्व सम्मेलन के समय महिलाओं के अधिकारों के लिए वैश्विक बहस में रफ्तार पकड़ी है।[3] पुरुषवादी मानसिकता के शिकार लोग अक्सर यह तर्क देते हैं कि निरक्षर महिलायें पंचायतों का कामकाज ठीक ढंग से नहीं समझ सकती है लेकिन सर्वेक्षणों के निष्कर्ष इसके उलट हैं। पिछले 20–22 वर्षों से भारत में पंचायतों के माध्यम से सशक्तीकरण का जो दौर प्रारम्भ हुआ है, उसमें महिलाओं की शासन में हिस्सेदारी एक व्यापक अर्थ रखती है, इसे मात्र वोट देने या प्रशासनिक प्रक्रिया का एक हिस्सा होने के अधिकार तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, जब तक कि शासन में निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया तक उन्हें पहुँचने का अवसर न मिले। दिलचस्प बात यह है कि एक तरफ जहाँ लोक सभा और विधान सभाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का मामला कई वर्षों से लंबित पड़ा है, दूसरी तरफ पंचायतों में महिलाओं को मिले एक तिहाई आरक्षण से जमीनी स्तर पर काफी बदलाव आये हैं और एक नयी राजनीतिक संस्कृति भी विकसित हुई है। राजनीतिक भागीदारी न केवल महिलाओं के हितों को बढ़ावा देने वाले महिलाओं के विकास का प्रतीक है बल्कि यह क्षेत्र का एक हिस्सा होने के लिए अन्य महिलाओं को जागरूक बनाता है और संगठित करता है। आज भारत में 12 लाख से अधिक महिला निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जो दुनिया के किसी देश में नहीं हैं। इतना ही नहीं अगर पूरी दुनिया के निर्वाचित महिला प्रतिनितियों की संख्या जोड़ी जाय तो भी वह संख्या इन भारतीय निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों से कम ही है। इस तरह भारत में लोकतंत्र की मजबूती के लिए एक ऐसी मौन लोकतांत्रिक क्रांति हो रही है जो अभी राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक रूप से भले ही दिखाई नहीं दे रही है पर उसकी धीमी आँच भारतीय लोकतंत्र को मजबूत बना रही है। देश में सत्ता–विमर्श के ढाँचे में भी बदलाव ला रहीं हैं। पंचायत स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ने स्थानीय स्तर पर सामुदायिक जीवन और उसकी चेतना तथा संस्कृति में भी परिवर्तन लाया है।

शोध.पत्र की परिकल्पना

प्रस्तुत शोध-पत्र में इस परिकल्पना को लेकर अध्ययन किया गया है कि नवीन पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं को आरक्षण के माध्यम से मिले राजनीतिक अवसर का सामाजिक एवं राजनीतिक विकास पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। महिलाओं का सशक्तीकरण अधिक प्रभावी रुप में हो सकता है। साथ ही इन परिकल्पनात्मक तथ्यों की जांच की गयी कि :- 1. पंचायती राज व्यवस्था सामाजिक विकास के साथ-साथ महिला उत्थान का सशक्त माध्यम हैं, 2. महिलाएँ देश की आधी आबादी हैं और वे एक जनप्रतिनिधि की भूमिका को पुरुषों के सामान ही निभा सकती हैं, 3. सामाजिक रुप से पिछड़ी तथा घर की चारदीवारी में बंद महिलाओं को राजनीतिक कौशल प्राप्त करने में समय लगेगा, 4. ग्रामीण परिवेश में पुरुष प्रभुत्व आज भी महिलाओं की राजनैतिक सशक्तीकरण व सहभागिता को स्वीकार नहीं कर पाया है, 5. ग्रामीण महिलाओं के सामने कुछ सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक समस्याएं व बाधाएं हैं, जो उन्हें स्वतंत्र रुप से बिना किसी हस्तक्षेप के कार्य करने से रोकती हैं।

प्रस्तावित शोध.पत्र के प्रमुख लक्ष्य व उद्देश्य

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य देश की पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला नेतृत्व विकास का अध्ययन करना है। ग्रामीण स्तर पर महिलाओं की स्वतंत्रता, राजनीति में उनकी भागीदारी तथा समाज में उनके आगे आने अथवा पुरुषों में उनकी समानता आदि प्रश्नों के बारे में जब हम सोचते हैं तो समाज में महिलाओं की एक दयनीय स्थिति उभरकर सामने आती है। महिला सशक्तीकरण के इतने प्रयास महिलाओं की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति को बनाते हैं परन्तु राजनीति का क्षेत्र लम्बे समय से पुरुषों का रहा है तथा राजनीति में महिलाओं की भागीदारी नाममात्र की रही है, इसलिए उनका सशक्तीकरण ही इस शोध-पत्र का प्रमुख उद्देश्य है। ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता का स्वरुप सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक पृष्ठभूमि में तीन प्रकार के पंचायत पदाधिकारियों के रुप में व्यक्त किया जा सकता है - सरपंच, नायब सरपंच और वार्ड मेम्बर।

सत्ता के स्वरुप में अपनी स्थिति के कारण ये सभी निर्णय प्रक्रिया पर असर डालते हैं। पंचायती राज संस्थाओं के इन लोकप्रिय प्रतिनिधियों का व्यवहार ही पंचायतों के निर्णय को प्रभावित करता है इसलिए इनकी राजनैतिक पृष्ठभूमि, राजनैतिक महत्वाकांक्षा, स्वयंसेवी संगठनों में भागीदारी, संबंधित पंचायतों की समस्याओं की समझ, ग्रामीणों से सम्पर्क और राजनीतिक निष्ठा के बारे में विस्तृत विचार-विमर्श से आ रहे बदलावों पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ेगा।

शोध.पत्र की अध्ययन पद्धति

प्रस्तुत शोध-पत्र में भारत वर्ष में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की बढ़ती हुई भूमिका एवं उनके सशक्तीकरण के लिए उत्तरोत्तर हुए विभिन्न आयामों का अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन पंचायती राज व्यवस्था के त्रिस्तरीय आयाम के अंतर्गत संपूर्ण देश में महिलाओं की शिक्षा, उनकी वर्तमान स्थिति, राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक स्थिति पंचायती राज व्यवस्था के आधार पर अध्ययन किया गया है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

शोध के उद्देश्य एवं क्षेत्र के अनुसार ऐतिहासिक, तुलनात्मक, पर्यवेक्षण, साक्षात्कार अनसूची, सारणीकरण, सांख्यिकी इत्यादि पद्धतियों का आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया गया है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के अधिनियमित होने के बाद संपन्न हुए पंचायत चुनाव में प्रत्यक्ष रुप से सहभागी होकर निकट से चुनाव के व्यावहारिक तरीकों का भी अध्ययन इस शोध-पत्र में किया गया है।

अध्ययन के स्रोत

किसी भी शोध व अनुसंधान के लिए तथ्यों का संकलन अति आवश्यक है। तथ्यों के संकलन के साथ ही उनका विश्वसनीय एवं सार्थक होना भी आवश्यक है। तभी शोध व अनुसंधान में वास्तविकता उभरकर सामने आती है। प्रस्तुत शोध-पत्र में प्राथमिक व द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। 1. प्राथमिक स्रोत- इसके अंतर्गत साक्षात्कार अनुसूची, साक्षात्कारी वार्तालाप, अप्रकाशित राजकीय प्रतिवेदन, छायांकन व अवलोकन पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। 2. द्वितीयक स्रोत- विषय से संबंधित सामाग्री राजकीय एवं संस्थागत प्रलेखों के प्रतिवेदन, प्रकाशित प्रलेख, शोध रिपोर्ट, जनगणना के आंकड़े, पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं, जर्नल्स, पंचायती राज विभाग एवं महिला एवं बाल विकास विभाग दारा जारी प्रगति पत्र, इंटरनेट आदि का प्रयोग द्वितीयक स्रोत में किया गया है।

शोध.पत्र की उपादेयता

प्रस्तुत शोध-पत्र पंचायती राज संस्थाओं में ग्रामीण महिलाओं तथा जन प्रतिनिधियों के नेतृत्व विकास तथा उनके राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक सशक्तीकरण में सहायक होगा। मेरा मानना है कि देश की आधी आबादी को सशक्त, मजबूत व आत्मनिर्भर बनाये बिना देश का समग्र व चहुंमुखी विकास नहीं किया जा सकता। इसलिए पंचायतों के माध्यम से देश की महिलाओं का सशक्तीकरण करना बेहद आवश्यक, महत्वपूर्ण और व्यापक विमर्श का विषय बन जाता है।

स्वतन्त्रता पूर्व भारतीय राजनीति में महिलाएँ

भारतीय महिलायें आजादी के पूर्व से राजनीति के साथ किसी न किसी रूप में संबद्ध रहीं हैं। वह स्वयंसेवक और नेता दोनों के रूप में स्वतन्त्रता आंदोलन का हिस्सा थीं। सामाजिक और धार्मिक सुधार और महिलाओं की शिक्षा इस विकास में महत्वपूर्ण कारक थे। भारत में महिलाओं का सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तन के लिए पहला आंदोलन 20वीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ, जब महिलायें भी पुरूषों के साथ स्वतंत्रता आंदोलन में सम्मिलित हुईं। इस परिदृश्य को कौन भूल सकता है जब बड़ी संख्या में साड़ी पहनकर महिलायें स्वतंत्रता आंदोलन में पुरूषों के साथ कार्य कर रहीं थीं, वे डंडे से नियंत्रण करने वाले सिपाहियों और जेल की सजा से बची रहीं, लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ये महिलायें कहाँ अदृश्य हो गयीं ? वे पारिवारिक उत्तरदायित्व निभाने के लिये वापस घरों में चली गयीं, उनका कामकाज व कार्य व्यवहार घर की चारदीवारी तक ही सीमित हो गया।[4] वे किसी पर आश्रित क्यों रहें इसलिए यह सोचा जाने लगा कि स्त्रियों को सत्ता में हिस्सा मिलना चाहिए, परिणामतः पंचायत से संसद तक आरक्षण की माँग की जाने लगी।

भारतीय महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु चलाये गये अभियान को दो चरणों में बाँटा जा सकता है :– प्रथम चरण (1917–28), जिसमें महिलाओं को मताधिकार दिलाना तथा उन्हें विधायिकाओं तक पहुँचाना प्रमुख मुद्दे थे। द्वितीय चरण (1928–37) में मताधिकार को और उदार बनाना तथा विधायिकाओं में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि प्रमुख विषय थे। मताधिकार प्राप्त करने वाले प्रतिनिधि मंडल में एनीबेसेंट, डॉ0 जोशी (रानी राजदेव), बेगम हसरत मोहानी एवं मार्गगेट तथा सरोजनी नायडू इसकी प्रमुख प्रतिनिधि थीं। इस महिला उत्थानवादी गुट ने प्रथम गोलमेज सम्मेलन (1930) में भी भाग लिया, जिसका भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने बहिष्कार किया था।[5] एक और प्रतिनिधि मंडल जिसकी अगुवाई मंडी की रानी श्रीमती अहमद तथा श्रीमती चिदाम्बर ने की थी, ने स्त्री मताधिकार हेतु पुरूषों के समान योग्यता की नहीं वरन् पत्नीत्व की विशेषताओं के आधार पर मताधिकार की माँग की गयी। ब्रिटिश सरकार ने सरकारी पक्ष से सहानुभूति रखने वाली दो उत्थानवादी महिलाओं राधाबाई सुबारोयान तथा बेगम शाहनवाज प्रसिद्ध मुस्लिम महिला समाजसेवी की नियुक्ति की, जिन्होंने पत्नीत्व विशेषता के आधार पर आरक्षण का समर्थन किया, किन्तु बाद में बूमेन इंडियन एसोसिएशन (डब्ल्यूआईए) पर महिला आंदोलन के तौर–तरीकों को लेकर दरार पड़ गयी।

1931 में कांग्रेस के मूल अधिकारों के संकल्पन में स्त्री–पुरूष समानता को स्वीकार कर लेने के बाद डब्ल्यूआईए, एआईडब्ल्यूसी तथा एनसीडब्ल्यूआई संगठनों की राष्ट्रवादी नेताओं ने सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में सम्मेलन किया तथा एक संयुक्त आशय पत्र की रूपरेखा बनायी जिसमें मतदान, चुनाव लड़ने, सार्वजनिक कार्यालय या रोजगार में लैंगिक आधार पर भेदभाव न करने, वयस्क मताधिकार तथा विधान मंडलों में महिला प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने हेतु विशिष्ट उपायों की अस्वीकृति आदि मुद्दों को शामिल किया गया। समानाधिकारवादी गुट ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में अल्पसंख्यक समिति को यह आशय पत्र दिया। इस सत्र में तीन महिला प्रतिनिधि उपस्थित थीं–राधाबाई सुब्बारोयान, बेगम शाहनवाज एवं सरोजिनी नायडू। इनमें से सरोजिनी नायडू तथा बेगम शाहनवाज ने अपनी स्थिति बदल ली तथा समानाधिकारवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, जबकि सुब्बारोयान का मत था कि समान आधारों पर पुरूषों से प्रतिस्पर्धा कर महिलायें चुनी नहीं जा सकेंगी। इसलिए उन्होंने प्रथम तीन विधानसभाओं में 5 प्रतिशत सीटें आरक्षित करने का सुझाव दिया। 1935 में भारत शासन अधिनियम पारित किया गया जिसमें महिलाओं हेतु 41 स्थान आरक्षित किये गये।[6] इस प्रकार राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु महिलाओं के द्वितीय चरण को मिश्रित सफलता मिली।

इसके अलावा कई घटनाओं ने महिलाओं के आत्मसम्मान में वृद्धि की। 1909 में महिलाओं के हितों की रक्षार्थ प्रयाग महिला समिति का गठन किया। वर्ष 1928 में सरोजिनी नायडू भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष चुनी गयी। केतकी भट्ट ने 1927–28 में भारत आये साइमन कमीशन का विरोध किया तथा 1930 के नमक सत्याग्रह में भाग लिया। एनी बेसेंट, विजयलक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी और अन्य कई ने अपने तरीके से महिला अधिकारों के लिये योगदान दिया। महिलाओं के भारतीय संघ (डब्ल्यूआईए) 1917, भारतीय महिलाओं की राष्ट्रीय परिवाद (एनसीडब्ल्यूआई) 1926 और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (एआईडब्ल्यूसी) 1927 जैसे संगठन महिला उत्पीड़न के खिलाफ आवाज के रूप में शुरू हुए और एक मजबूत राष्ट्रवादी भावना विकसित की, हालाँकि वे कुलीन आधारित बने रहे।[7]

स्वतन्त्रता के पश्चात पंचायती राज संस्थाओं के लिए पृष्टभूमि

स्वतन्त्रता के पश्चात प्रत्येक आँख में आँसू पोंछने का जो सपना राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने देखा था उसे व्यावहारिक स्वरूप देने हेतु 26 जनवरी, 1950 को लागू भारतीय संविधान के भाग–4 के नीति निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 में राज्य को निर्देश दिया गया कि वह गाँवों में पंचायतों की स्थापना करने तथा उन्हें ऐसी शक्तियाँ देने के लिए उचित कदम उठाये, जो स्थानीय स्वशासन के लिए आवश्यक हो। इसके अलावा संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार भी प्रदान किये गये

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

हैं। संविधान के अनुच्छेद 15(1) के अनुसार राज्य नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, जन्मस्थान या इनमें से किसी एक आधार पर कोई भी विभेद नहीं करेगा। इसी अनुच्छेद के भाग–3 में राज्य को महिलाओं के सम्बन्ध में विशेष अधिकार प्रदान किया गया है, जिसके अनुसार महिलाओं और बालकों के लिए राज्यों को विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं किया जा सकेगा। संविधान के भाग–4 में वर्णित नीति निदेशक सिद्धान्त भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से राज्य को महिलाओं की स्थिति सुधारने को प्रेरित करते हैं। इसमें अनुच्छेद 38, 39(2), (3), (6), 41, 43 तथा 47 सम्मिलित किये जा सकते हैं।[8]

भारतीय महिलाओं को नागरिक के रूप में संवैधानिक आधार पर सभी अवसर पहले से ही प्राप्त रहे हैं, किन्तु राजनैतिक निर्णयकारिता में महिलाओं की भागीदारी, स्वतन्त्रता के बाद के कई दशकों तक सुनिश्चित नहीं हो पायी। किन्तु यह अनुभव किया गया कि यदि महिलाओं की निर्णयकारिता के स्तर पर पहुँचना सुलभ कर दिया जाय तो महिलाओं की समस्याओं को सुलझाने में सरलता होगी। आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय आदि के कार्यक्रमों को संपादित एवं संचालित करने में भी, महिलाओं की रचनात्मकता तथा उनकी क्षमता का सही सदुपयोग हो सकेगा। अतः यह आवश्यक होता जा रहा था कि निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाकर शेष आधी दुनिया के भी साथ न्याय किया जाय।

19वीं शताब्दी में महिलाओं की दशा को सुधारने के लिए जहाँ धार्मिक और सामाजिक सुधारकों ने अनेक प्रयत्न किए वहीं नवीन मध्यम बुद्धिजीवी वर्ग की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका रही। सरकार ने भी अनेकों कानून बनाकर इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। साथ ही महिलाओं को भारतीय समाज में और सशक्त बनाने के उद्देश्य से भारत के संविधान में स्त्री–पुरूष समानता कानून (अनुच्छेद–14) बनाया गया। इसके बाद अनेक अधिनियम जैसे 1955 का हिन्दू दत्तक ग्रहण अधिनियम तथा 1956 में उत्तराधिकार अधिनियम के द्वारा संपत्ति में अधिकार प्रदान किया। समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के द्वारा आर्थिक अधिकारों के साथ–साथ सम्मान एवं सुरक्षा प्रदान की गई। इसी के साथ 1992 में 'राष्ट्रीय महिला आयोग' तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत महिला बाल विकास का गठन किया गया तथा 2001 में राष्ट्रीय महिला नीति बनाई गई जिसमें महिलाओं और उनके कल्याण से संबंधित अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम बनाए गए।[9]

भारत में पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी के मुद्दे ने जनवरी, 1957 में गठित बलवंत राय मेहता समिति के माध्यम से थोड़ी बहुत रफ्तार पकड़ी, जब समिति ने 1959 में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण नाम से अपनी रिपोर्ट सौंपी, तथा इसी कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर राजस्थान के नागौर जनपद स्थित बगदरी गाँव से पंचायती राज संस्था की शुरूवात हुई। बाद में इस संस्था को आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र तथा गुजरात सरीखे भारत के कई महत्वपूर्ण राज्यों में लागू किया गया। इस कमेटी ने देश के उत्थान में महिलाओं की भूमिका को महत्वपूर्ण बताते हुए यह विचार व्यक्त किया कि जब तक देश की महिलाओं को विकास प्रक्रिया में भागीदारी नहीं बनाया जायेगा तब तक देश की कोई वास्तविक प्रगति नहीं हो सकेगी। यहाँ पर प्रश्न केवल महिलाओं की स्थिति सुधारने की नहीं है, बल्कि इस आधी आबादी को किस प्रकार इस स्थिति में लाया जाय जिससे महिला न सिर्फ आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी हो सके, बल्कि वह अपना निर्णय लेने में स्वयं सक्षम और स्वतन्त्र हो सके। इस समस्या पर विचार करते हुए बलवंत राय मेहता कमेटी ने अपनी अनुशंसा में प्रत्येक पंचायत समिति में महिला प्रतिनिधित्व के अनुभव में दो महिलाओं को नामांकित करने का प्रावधान रखा गया था। 1974 (छठीं पंचवर्षीय योजना) में पहली बार बृहद् स्तर पर महिलाओं के विकास पर अलग से सोचा गया तथा महिलाओं की स्थिति पर आयोग की रिपोर्ट ने महिला पंचायतों के गठन करने का सुझाव दिया। इसी तरह 1977 में जनता पार्टी सरकार द्वारा गठित अशोक मेहता कमेटी ने भी 1978 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में मजबूत निर्णय लेने की शक्तियों के साथ ही महिलाओं और अनुसूचित जातियों और जन जातियों की तरह के अन्य वंचित समूहों को शामिल कर एक और अधिक मौलिक विकेन्द्रीकृत संरचना बनाने की सिफारिश की।[10]

इस बीच महिला शोषण के विरूद्ध भी कई कानून बने जिनमें दहेज, अन्य अत्याचार एवं उनके उत्तराधिकार से सम्बन्धित कानून निर्मित किये गये। किन्तु पंचायतों में महिला अधिकारिता हेतु मई, 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने एक नया संविधान संशोधन (64वाँ) विधेयक संसद में पेश किया। यह विधेयक पंचायती राज विधेयक के रूप में जाना गया। इसमें पंचायतों के जरिये पहली बार एक तिहाई आरक्षण महिलाओं को देने की बात की गयी। प्रधानमंत्री राजीव गाँधी का मानना था कि यह आरक्षण विधेयक जनता की शक्ति है, यदि विकास की राह पर आगे बढ़ना है तो देश की सभी शक्ति को मिलाना जरूरी है। महिलायें देश की आधी शक्ति है यदि हम उन्हें साथ नहीं लेते हैं तो हमारी आधी ताकत कम हो जायेगी। परन्तु जिस प्रकार और जिन परिस्थितियों में यह विधेयक लाया गया और इसमें सम्मिलित कुछ प्रयोजनों के कारण सामान्यतः राज्यों को यह संदेह हुआ कि संविधान के इस संशोधन का वास्तविक लक्ष्य केन्द्र सरकार द्वारा गाँवों के लोगों से सीधा सम्पर्क स्थापित करना था। इस संदेह के कारण अधिकतर विरोधी दल 64 वें संवैधानिक संशोधन के प्रस्तुत स्वरूप से संतुष्ट नहीं थे।[11] परिणामतः कांग्रेस पार्टी के व्यापक बहुमत के कारण यह विधेयक लोकसभा में तो पारित हो गया, परन्तु आवश्यक बहुमत के अभाव में यह राज्यसभा में पारित नहीं हो सका।

राज्यों में संदेह तथा विरोधी दलों के विरोध के कारण 64वाँ संवैधानिक संशोधन पारित तो नहीं हो सका किन्तु इस समय तक पंचायती राज के पुर्नजीवन की आवश्यकता तथा इसको महत्वपूर्ण बनाने की आकांक्षायें भारतीय जनमानस में आम चर्चा का विषय बन चुकी थी। इस तरह स्वतन्त्रता के पश्चात यदि पंचायती राज व्यवस्था को दो चरणों में बाँटा जाय तो हम महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को सरलता से समझ सकते हैं। प्रथम चरण 1959–1993 तक एवं द्वितीय चरण 1993 के पश्चात्। प्रथम चरण में जहाँ स्त्रियों का प्रतिशत नगण्य रहा, वहीं द्वितीय चरण में 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन के रूप में, भारतीय राजनीति में महिलाओं को जमीनी स्तर पर आरक्षण की व्यवस्था कर उनके सपनों को यथार्थ में परिवर्तित रखने का सफल प्रयास हुआ। इस संशोधन द्वारा पहली बार पंचायतों को इस बात के लिए अधिकृत किया गया कि वे स्वयं विकास कार्यों का संपादन करें।[12] किन्तु इस संवैधानिक संशोधन की शुरूवात 1991 में तत्कालीन पी0वी0 नरसिंह राव की कांग्रेस सरकार द्वारा पंचायतों के लिए एक सर्वमान्य कानून बनाने की आवश्यकता के साथ शुरूवात की गयी। अतः अनेक राजनीतिक दलों से विचार–विमर्श करके एक नया संविधान संशोधन विधेयक 16 सितम्बर, 1991 को लोक सभा में प्रस्तुत किया गया। सदन ने गहन विचार–विमर्श के लिए इस विधेयक को संसद के 30 सदस्यीय संयुक्त समिति को शौंप दिया। जिसमें लोकसभा के 20 तथा राज्यसभा के 10 सदस्य थे तथा इस संयुक्त समिति के अध्यक्ष नाथूराम मिर्धा थे। संसद के दोनों सदनों तथा विभिन्न दलों के सदस्यों से गठित इस संयुक्त समिति के विचार तथा सुझावों के पश्चात् 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा द्वारा और 23 सितम्बर, को राज्यसभा द्वारा स्वीकृत प्रदान की गयी। तत्पश्चात् आधे से अधिक राज्यों के विधान मंडलों ने इस विधेयक को अपनी स्वीकृत प्रदान की जिसमें 73 वें संविधान संशोधन को वैधानिक स्वरूप प्राप्त हुआ तथा शीघ्र ही इस विधेयक पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के पश्चात 24 अप्रैल, 1993 को अधिसूचना जारी कर देश में संवैधानिक स्वरूप से स्थापित नई पंचायती

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

राज व्यवस्था लागू हो गयी।[13] संविधान में किये गये इस संशोधन ने समाज की प्रवाहयान धारा को एक नवीन और क्रांतिकारी दशा दी जिससे ग्राम सभा की 'ग्राम संसद' के रूप में परिकल्पना ने ग्रामीण अंचलों का स्वरूप परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम

73वें संविधान संशोधन के साथ ही भारत ने शासन के संस्थागत ढाँचे में एक बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन किया, इस संशोधन के साथ गाँवों में स्वशासन के लिए शक्ति प्रदान करने वाली लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के प्रणाली की शुरूवात हुई, जिसका उद्देश्य आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजना बनाने और योजनाओं को लागू करने, स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने के लिए पंचायतों को सक्षम बनाना था। भारत में पंचायती राज संस्थाओं के विकास में 73वें संविधान संशोधन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इस व्यवस्था ने न केवल इसे एक संवैधानिक स्वरूप प्रदान किया बल्कि भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को भी मजबूती प्रदान की। इस संशोधन के माध्यम से पंचायतों को संवैधानिक स्वरूप मिलने से जहाँ पंचायतों की राज्य सरकारों पर निर्भरता कम हुई वहीं पंचायतों को स्वतन्त्र रूप से बिना किसी हस्तक्षेप के कार्य करने का अवसर मिला। इस संशोधन के माध्यम से संविधान में एक नया अध्याय–9 जोड़ा गया तथा भारतीय संसद ने 24 अप्रैल, 1993 को राज्यों को निर्देश दिया कि वे एक वर्ष के अन्दर इस संशोधन के दिशा–निर्देशों के अनुसार जल्द–जल्द अपने–अपने राज्यों में कानून बनाकर पंचायतों को मजबूती प्रदान करें। इस हेतु अध्याय–9 में ही 16 अनुच्छेद (243 से 243 ण तक) और एक नवीन अनुसूची (ग्यारहवीं अनुसूची) का प्रावधान संविधान के अन्दर किया गया।[14]

उल्लेखनीय है कि 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से स्थापित पंचायती राज प्रणाली के जिन मूल तत्वों को संस्थापित किया गया वह एक 'त्रिस्तरीय व्यवस्था' (Three tire System) था जिसमें ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, जिला स्तर पर जिला पंचायत तथा मध्यवर्ती स्तर पर क्षेत्र पंचायत प्रमुख थे। इसके अलावा अध्याय–9 के उक्त अध्याय में पंचायतों की परिभाषा से लेकर ग्राम पंचायतों के गठन व संरचना, पंचायत के अध्यक्षों का निर्वाचन, स्थानों का आरक्षण, पंचायतों का कार्यकाल अथवा अवधि, सदस्यता हेतु अर्हतायें, पंचायतों की शक्तियाँ, प्राधिकार एवं उत्तरदायित्व, पंचायतों द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्तियाँ, वित्तीय स्थिति के पुनर्विलोकन के लिए वित्त आयोग, लेखाओं की संपरीक्षा, राज्य निर्वाचन आयोग तथा निर्वाचन सम्बन्धी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप के वर्जन आदि से सम्बन्धित व्यवस्था 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से की गयी है।

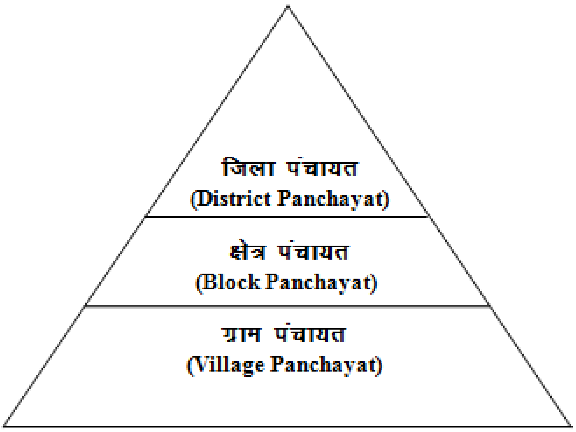

इस प्रकार ग्रामीण शासन के क्षेत्र में प्रवर्तित कमियों और न्यूनताओं, जिनमें पंचायतों को संवैधानिक मान्यता का अभाव, इनके अनियमित चुनाव, लम्बे समय तक इनके अधिक्रमित रहने, दयनीय आर्थिक दशा, पर्याप्त शक्तियों व अधिकारों का अभाव, वंचित वर्गों (एससी,एसटी व महिला) को अपर्याप्त प्रतिनिधित्व आदि के लिए प्रभावी व्यवस्था के अभाव की स्थितियों को समाप्त करने हेतु 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से प्रभावी कदम उठाये गये। इस संविधान संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 243घ (iii) में यह प्रावधान किया गया कि प्रत्येक पंचायत के प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के कम से कम एक–तिहाई स्थान (जिनके अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या भी है) स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और ऐसे स्थान किसी पंचायत में भिन्न–भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में चक्रानुक्रम से आवंटित किये जा सकेंगे। इसके अलावा प्रत्येक स्तर पर पंचायतों में अध्यक्षों के पदों की कुल संख्या के कम से कम एक–तिहाई पद स्त्रियों के लिए आरक्षित होंगे।[15] 73वें संशोधन अधिनियम में प्रथमतः महिलाओं हेतु पदों के आरक्षण के फलस्वरूप ग्राम पंचायत के स्तर पर लगभग 10 लाख सदस्यों एवं 80 हजार ग्राम प्रधानों के पद महिलाओं ने संभाला, पंचायत स्तर पर 2 लाख सदस्य एवं 18 हजार अध्यक्ष पदों पर एवं जिला पंचाायत स्तर पर 15 सौ सदस्य और 160 अध्यक्षों के पद पर महिला प्रतिनिधियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। यहाँ तक कि 74 वें संविधान संशोधन के माध्यम से नगरीय स्थानीय निकायों में भी महापौर एवं पार्षद, नगर अध्यक्षों एवं सदस्यों के पद पर भी महिलाओं ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करायी है। पुरूष प्रधान समाज के लम्बे समय से उपेक्षा की शिकार तथा उन्हीं के दिशा–निर्देशों पर चलने वाली उपेक्षित महिलाओं के लिए पंचायतों और स्थानीय निकायों में अपने आरक्षित पदों पर निर्वाचित होना सुखद है।

1994 में इस नये अधिनियम के प्रभावी होने के पश्चात् यदि भारत के पंचायती राज व्यवस्था पर नजर डाली जाय तो महिलाओं की वास्तविक स्थिति स्पष्ट होती है। राजस्थान के बाड़मेर जनपद में 73वें संविधान संशोधन के पूर्व जितनी बार पंचायत चुनाव हुए कोई भी महिला सरपंच पद पर निर्वाचित नहीं हुई थी, परन्तु संशोधनोपरांत इस जनपद के 380 ग्राम पंचाायतों में से 129 पद पर महिला सरपंच चुनी गयीं। इसी प्रकार इन 380 ग्राम पंचायतों में 4170 वार्ड पंच चुने गये, जिनमें लगभग 1390 महिलाएं थीं। उत्तर प्रदेश में सम्पन्न हुए पंचायत चुनावों में जिला पंचायत अध्यक्ष पद हेतु 50 प्रतिशत से अधिक महिलाओं ने चुनाव में विजयी घोषित होकर अध्यक्ष का पदभार ग्रहण किया। महिलाओं के जागरूकता के प्रति चलाये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों से न केवल निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को स्वतन्त्र एवं असरदार भूमिका निभाने का अवसर मिला है अपितु साधारण ग्रामीण महिलाओं का भी पंचायत के प्रति जुड़ाव बढ़ा है।[16]

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243(छ) के अन्तर्गत 11वीं अनुसूची में उल्लिखित 29 विषयों पर 73वें संविधान संशोधन विधेयक ने राज्य सरकारों को इन स्थानीय निकायों को विशेष शक्तियाँ और जिम्मेदारियों को न्यायसंगत बनाने वाले सक्षम पंचायती राज कानून को पारित करने का निर्देश दिया। पंचायतों के लिए इन विषयों में कृषि, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, पशुपालन, मत्स्य पालन, सामाजिक वानिकी, लघु वन उत्पाद, लघु उद्योग, ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पीने का पानी, ईंधन और चारा, सड़क, ग्रामीण विद्युतीकरण, गैर–परंपरागत ऊर्जा, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण, प्रौढ़ शिक्षा, पुस्तकालय, सांस्कृतिक गतिविधियाँ, बाजार और हाट, स्वास्थ्य और स्वच्छता, परिवार कल्याण, महिला एवं बाल विकास, समाज कल्याण, कमजोर वर्गों का कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सामुदायिक सम्पत्ति शामिल है।

प्रमुख उपलब्धियाँ

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

पंचायतों को वैधानिक दर्जा देने और उन्हें स्वशासित संस्थाओं के तौर पर पहचान देने वाले संविधान के 73वें संशोधन ने देश के लोकतांत्रिक मानस में गहरे तक अब अपनी पैठ बना ली है। इसकी एक बानगी है इसकी संख्या। देश में आज चुने हुए प्रतिनिधियों यानी सांसद और विधायकों की संख्या महज पाँच हजार के आसपास है जबकि पंचायती राज अधिनियम के तहत देशभर में विभिन्न स्तरों (ग्राम सभा, पंचायत समिति और जिला परिषद) पर लगभग तीस लाख से ज्यादा प्रतिनिधि हैं जो कि दुनिया की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक व्यवस्था है।

दूसरा और सबसे ज्यादा अहम योगदान है कि 73वें संशोधन ने लोकतंत्र और राजनीतिक समावेशिता की जड़ें मजबूत की है और समाज के सबसे पिछड़े और वंचित तबकों की भागीदारी को बढ़ाया है। 73वें संशोधन के तहत महिलाओं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों के लिए लागू होने वाले बाध्यकारी आरक्षण के चलते इन समाज के दास लाख से अधिक नए प्रतिनिधियों को लोकतांत्रिक प्रक्रिया में स्थान मिला है। निर्विवाद रूप से ये देश में राजनीति के क्षेत्र में महिलाओं के लिए सबसे ज्यादा सकारात्मक बदलाव लोने वाली प्रक्रिया है। जहाँ एक ओर संसद और राज्य की विधान सभाओं में महिलाओं की भागीदारी महज 8 फीसदी है वहीं इस क्षेत्र में बहुत बड़ी संख्या यानी लगभग 49 फीसदी चुनी हुई प्रतिनिधि महिलाएँ हैं। आज देश में महिला प्रतिनिधियों की तादात लगभग 14 लाख है। इनमें से 86 हजार स्थानीय निकायों के प्रतिनिधि हैं।[17]

हालाँकि ये भी बात सही है कि बहुत सारे ऐसे मामले हैं जहाँ ये प्रतिनिधित्व सिर्फ सांकेतिक बनकर रह गया है या फिर महिला प्रतिनिधि यहाँ तक कि सरपंच और जिला परिषद अध्यक्ष जैसे पदों पर चुनी गई प्रतिनिधि भी महज पुरूषों की कठपुतली (कई बार अपने पति की और कई बार परिवार के दूसरे सदस्यों की) बनकर रह गई हैं। बावजूद इसके हाल के दिनों में हुए अध्ययन और जारी हुई रिपोर्टें बताती हैं कि पंचायतों में इस बाध्यकारी आरक्षण की वजह से बड़ी संख्या में इस बाध्यकारी आरक्षण की वजह से बड़ी संख्या में सकारात्मक नतीजे सामने आये हैं। मिसाल के तौर पर एस्थर डफलों और राघवेन्द्र चट्टोपाध्याय ने राजस्थान और पश्चिमी बंगाल में पंचायतों पर किए गए अपने अध्ययन में पाया कि स्थानीय निकायों में महिला प्रतिनिधित्व का वंचित तबकों के पर्याप्त मात्रा में मिलने वाले राशन दिये जाने की प्रक्रिया पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। लक्ष्मी अय्यर द्वारा भी किए गए इसी तरह के एक अध्ययन में पता चला कि स्थानीय निकायों में महिलाओं के होने से दूसरी महिलाओं को अपराध की घटनाओं की जानकारी देने और महिलाओं के हित से जुड़े मामले उठाने में सहूलियत होती है। हालाँकि इस मामले में राष्ट्रव्यापी स्तर पर एक अध्ययन का सामने आना अभी बाकी है लेकिन फिर भी इस बात के तो कुछ स्पष्ट प्रमाण हैं ही कि अपने निम्न शिक्षा स्तर और राजनीतिक माहौल तथा सूझबूझ की कमी के बावजूद महिलाएँ और अनुसूचित जाति–जनजाति के चुने प्रतिनिधि अपने राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग कर रहे हैं और सदियों पुराने दमन से बाहर निकलकर नेता के तौर पर उभर रहे हैं।

तीसरी अहम बात है कि दशकों पहले जिन्हें नखदंत विहीन संस्थान कहा जाता था, (बलवंत राय मेहता कमेटी की 1957 में आई सिफारिशों के बाद), उन्हें 73वें संशोधन ने न केवल लोककल्याण के काम कराने और प्रस्तावों और खर्चों को तैयार करने की तादात दी बल्कि पंचायती राज अधिनियम के तहत अपने रोजमर्रा के कार्यों के लिए कई महत्वपूर्ण आय के स्रोत (भले ही वो कागज पर ही हों) भी दिए। स्थानीय प्रशासन में उनकी अहम भूमिका को पहचाने हुए, 13वें और 74 वें वित्त आयोगों ने केन्द्र से मिलने वाले मदों का एक बड़ा हिस्सा स्थानीय निकायों को दिया। एन0के0 सिंह की अध्यक्षता वाले 15वें वित्त आयोग ने भी मौजूदा मदद को दो फीसदी बढ़ाने का प्रस्ताव किया है। ये पूरी तस्वीर बदलकर रख देने वाला कदम साबित हो सकता है।

चौथी बात कि विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था इतने दूरगामी प्रभाव देने वाली है कि केन्द्रीय सरकार ने भी मनरेगा और स्वच्छ भारत जैसी अपने सबसे महत्वाकांक्षी योजनाओं को लागू करने के लिए पंचायतों को ही प्रमुख योजना और क्रियान्वयन केन्द्र बनाया है।

जहाँ तक स्थानीय निकायों को वास्तव में अधिकार दिये जाने की बात है तो आखिरकार, निचले स्तर से बनने वाले दबाव की वजह से विकेन्द्रीकरण की मुहिम रंग लाती दिख रही है। हाल ही में राज्यों के बीच पंचायतों की सक्रियता, अधिकारों के हस्तांतरण और धन देने तथा दायित्वों को लेकर एक स्वस्थ प्रतियोगिता भी शुरू हुई है। मिसाल के तौर पर केरल और कर्नाटक से प्रेरणा लेकर (जिन्होंने 26 विभागों में अधिकारों का हस्तांतरण किया) राजस्थान ने भी कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला, बाल एवं सामाजिक कल्याण जैसे नौ विभागों में धन, अधिकार और अधिकारों का हस्तांतरण किया है। उसी तरह बिहार की सरकार ने भी पंचायत सरकार जैसे अनूठे प्रयोग शुरू किए हैं जिसमें विकास से जुड़ी सभी योजनाओं के जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन में प्रमुखता दी गई है। लगभग 30 सालों के इंतजार के बाद हाल ही में झारखंड में भी पंचायत चुनाव हुए हैं। कुल मिलाकर विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया अब मजबूती से आगे बढ़ रही है और अब इसकी गति को वापस मोड़ पाना नामुमकिन लगता है।

मौके जो हाथ से निकले

इन तमाम सकारात्मक खबरों और उपलब्धियों के बीच विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को धीमा करने में तमाम संस्थागत चुनौतियों और सिस्टम से जुड़ी समस्याओं का प्रमुख हाथ रहा है। मिसाल के तौर पर राज्यों की एक बड़ी संख्या इससे जुड़ी जरूरी अर्हताओं जैसे कि राज्य पंचायत अधिनियम की व्यवस्था करना, राज्य आयोग का गठन करना तथा राज्य निर्वाचन आयोग के साथ ही जिला योजना कमेटियों का गठन करने आदि को पूरा करती हुई नजर आती है। लेकिन अभी बड़ी संख्या में ऐसे भी राज्य हैं जिन्होंने इन निकायों को अभी तक धन और अधिकारों का हस्तांतरण नहीं किया है। एक ओर केरल और पश्चिमी बंगाल जैसे राज्यों ने 26 निकायों में ये हस्तांतरण कर दिया है वहीं कई राज्यों में सिर्फ तीन विभागों तक में ही ये काम हो पाया है। तमाम मामलों में जिन राज्यों में हस्तांतरण हो भी चुका है वहाँ पर भी इन विभागों की ओर से पंचायतों को व्यावहारिक और जमीनी स्तर पर ये हस्तांतरण नजर नहीं आता है। यहाँ पर नौकरशाह और विभाग तथा एजेंसियाँ ही सारा काम अपने हाथ में लिए हुए हैं। कई राज्यों में तो पंचायतों के समानांतर कई संस्थाएँ खड़ी की जा रही हैं जो उनके हिस्से का सारा काम कर रही हैं। मिसाल के तौर पर हरियाणा सरकार ने एक ग्रामीण विकास एजेंसी मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में बना दी है जो स्थानीय निकायों का सारा कामकाज देखती है।

सार्वजनिक वस्तुओं और सेवाओं को ज्यादा बेहतर तरीके से लोगों तक पहुँचाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं का इस्तेमाल किए जाने को लेकर बनी एक विशेषज्ञ कमेटी की रिपोर्ट से खुलासा हुआ कि एक मनरेगा और पिछड़े क्षेत्रों को दी जाने वाली सहायता राशि 'बैकवर्ड रीजन ग्राण्ट फंड' को छोड़ दें तो लगभग डेढ़ सौ से ज्यादा केन्द्रीय योजनाओं में से किसी में भी पंचायती संस्थाओं की अहम भूमिका नहीं दी गई। ये हाल तब है जब कैबिनेट सचिव ने 8 नवम्बर, 2004 के अपने आदेश में साफ तौर पर इसे लागू किये जाने को कहा था। आज भी विभिन्न राज्यों में इन कार्यों को संबंधित विभाग ही संभाल रहे हैं। मोटे तौर पर कहें तो

पंचायतों को अभी भी स्थानीय शासन प्रक्रिया के पूर्ण रूप से स्वायत्तशासी संस्थान के रूप में तैयार होना अभी बाकी है। इसके पीछे बड़ी वजह है राज्यों के राजनीतिक नेतृत्व और नौकरशाही का लगातार हो रहा विरोध जो मानते हैं कि पंचायतों के उभार के साथ ही उनकी भूमिका निरर्थक होती जाएगी। इस तरह 73वें संविधान संशोधन के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए राजनीतिक इच्छा शक्ति की कमी साफ नजर आती है।

उससे भी ज्यादा खतरनाक चलन ये है कि इन संस्थाओं के गठन के 25 साल के बाद भी इन्हें मजबूत किए जाने और इनकी क्षमता बढ़ाने के लिए बहुत कम प्रयास किए गए हैं। बहुत ही कम राज्यों ने पंचायतों की नियोजन प्रक्रिया पर विशेष ध्यान दिया है और इसके समावेशीकरण पर काम किया है। कई राज्यों ने तो नए चुने गए प्रतिनिधियों के अधिकारों को सुनिश्चित करने और क्षमता को बढ़ाने की दिशा में कोई ध्यान ही नहीं दिया है। इनमें से कई प्रतिनिधि तो समाज के बेहद पिछड़े तबके से आते हैं। लिहाजा इतने होनहार संस्थान की विश्वसनीयता क्षमता के विकसित न होने से प्रभावित हुई है। ऐसे में कोई हैरानी की बात नहीं है कि तमाम चुने हुए प्रतिनिधि साधारण कार्यों और जिम्मेदारियों के लिए भी अधिकारियों का मुँह ताकते हैं और इस तरह से उपहास का पात्र बनते हैं। ये पिछड़े और गरीब इलाकों में ज्यादा नजर आता है जहाँ पर चुने हुए प्रतिनिधियों को ग्रामीण विकास की योजनाओं को लागू करने में भी काफी मुश्किलें आती हैं। बिडंबना ये है कि इस क्षमता की कमी को बड़ी सफाई से राजनीतिक और प्रशासनिक अमला उनके खिलाफ इस्तेमाल करता है और इन संस्थाओं को आगे विकसित नहीं होने देता। खासतौर पर पेसा एक्ट (देश के शेड्यूल्ड इलाकों) वाले क्षेत्रों में ये हालत ज्यादा खराब है।[18]

अधिकारों और क्षमता से जुड़े मुद्दों के अलावा कई दूसरे गंभीर मुद्दे भी हैं, विशेष तौर पर अपर्याप्त वित्तीय शक्तियों का मामला जिसकी वजह से इन स्वशासित संस्थाओं को राज्य और केन्द्र की सरकारों की दया पर निर्भर रहना पड़ता है। एक ओर जहाँ पंचायतों को कई कार्यों की जिम्मेदारी दी गई है, वहीं पर दूसरी ओर उनके लिए कर लगाने का अधिकार बेहद सीमित रखा गया है। कोई भी पंचायत किसी संपत्ति पर कर नहीं लगा सकती। यहाँ तक कि इस मामले में न्यायपालिका से भी उन्हें बहुत मदद नहीं मिली। इस मामले में एक बेहद चर्चित दाभोल की घटना का जिक्र जरूरी है, जहाँ पर एनरॉन कंपनी पर एक ग्राम सभा ने टैक्स लगाने की कोशिश की लेकिन वो अदालत में हार गई। इस तरह से पंचायतों के अधिकार क्षेत्र को बढ़ाने और उनके औचित्य को स्पष्ट करने का प्रमुख कार्य अभी दिवास्वप्न ही लगता है।

आखिरी लेकिन सबसे अहम बात ये है कि अभी तक पंचायतों को ई–गवर्नेंस के दायरे में लाने के लिए काफी कम प्रयास किए गए हैं। इस बात में कोई शक नहीं है कि नए जमाने की तकनीक (आईसीटी) का फायदा उठाते हुए जवाबदेही, पारदर्शिता और कार्यसाधकता को बढ़ाया जा सकता है। हालाँकि इसके बावजूद देश की ढाई लाख पंचायतों में से आधी पंचायतें भी ई–पंचायत प्रोजेक्ट के दायरे में नहीं हैं। यहाँ ये ध्यान रखना चाहिए कि पंचायतों के लिए आईसीटी अभियान 2004 में ही शुरू किया गया था।

अंत में ये कहना सही होगा कि महिलाओं तथा दूसरे पिछड़े और हाशिए पर खड़े समाज के सशक्तीकरण जैसी उपलब्धियों के बावजूद विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया काफी धीमी, सुस्त और असंतोषजनक है। इन संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना जहाँ एक ओर इस विविधताओं वाले इस देश में बरसों से हाशिए पर पड़े समाज को मुख्यधारा में समावेशित किए जाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था वहीं अब इस सिलसिले में केन्द्र और राज्य के राजनीतिक हुक्मरानों की ओर से एक परिवर्तनकारी और ठोस कदम उठाये जाने की जरूरत है। उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले वक्त में पंचायतें देश के 'लघु गणतंत्र' के रूप में उभरकर सामने आयेंगी।

महिलाओं के राजनीतिक.आर्थिक सशक्तीकरण के रूप में पंचायती राज

देश के विभिन्न भागों में पंचायती राज संस्थाओं पर हुए अध्ययन एवं प्रतिवेदन महिलाओं के प्रदर्शन एवं अनुभव को प्रदर्शित करते हैं। इससे न केवल इनकी पहचान, मान्यता, विश्वास, प्रदर्शन एवं प्रभावी सहभागिता प्रदर्शित होती है बल्कि पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के वाहक के रूप में उभरी है। अब तक की प्रगति यह प्रदर्शित करती है कि ग्रामीण भारत में महिलाओं में चेतना, जागरूकता, ज्ञान, विश्वास, आकांक्षाएँ, स्व–बोध, सहभागिता, पंचायत एवं बाहरी नेतृत्व, पंचायतों एवं स्वयं पर पड़ने वाले प्रभावों के मामलों में पंचायती राज ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

राजनीतिक प्रक्रिया और राजनीतिक संस्थाओं में महिला की भागीदारी से शासन की गुणवत्ता में भी सुधार आया है। इनकी भागीदारी नागरिक समाज के उन्नयन, खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन, पर्यावरण की सुरक्षा, आर्थिक तथा जीविका से जुड़े मुद्दों में ज्यादा है क्योंकि इनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध महिलाओं से है और ये महिला सशक्तीकरण के सशक्त माध्यम हैं।

सारणी–1

वर्ष 2009 में पंचायत में महिलाओं के निर्वाचित प्रतिनिधित्व की राज्यवार संख्या

	Gram Panchayat			Intermediate Panchayat			Zila Panchayat			Representation at all levels as on 1 March, 2013		
State/UTs	Total	Women	%	Total	Women	%	Total	Women	%	Total	Women (No.)	%
Andhra Pradesh	208291	68736	33.0	14617	4919	33.6	1095	364	33.2	254487	85154	33.5
Arunachal Pradesh	6485	2561	39.4	1639	577	35.2	136	45	33.0	9336	3889	41.6
Assam	22898	8970	39.2	2148	791	36.8	390	135	34.6	26844	9903	36.9
Bihar	117397	64152	54.6	11537	5671	49.1	1157	577	49.8	136130	68065	50.0
Chhattisgarh	157250	53045	33.7	2977	1005	33.7	321	109	33.9	158776	89538	54.5
Goa	1509	514	34.0	0	NA	NA	50	20	40.0	1559	504	32.3
Gujarat	109209	36400	33.3	4161	1394	33.5	817	274	33.5	118751	39206	33.0
Haryana	66588	24406	36.6	2833	962	33.9	384	135	35.1	68152	24876	36.5
Himachal Pradesh	22654	8864	39.1	1676	596	35.5	251	92	36.6	27832	13947	50.1

Jammu & Kashmir	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA
Jharkhand	0	0	0	0	0	0	0	0	0	53207	31157	58.6
Karnataka	91402	39318	43.0	3683	1519	41.2	1005	373	37.1	95307	41577	43.6
Kerala	16139	4904	30.3	2004	609	30.3	339	119	35.1	19107	9907	51.9
Madhya Pradesh	388829	133508	34.3	6851	2378	34.7	836	310	37.0	393209	198459	50.5
Maharashtra	223857	74620	33.3	3922	1307	33.3	1961	654	33.3	203203	101466	49.9
Manipur	1675	730	43.5	0	0	0	61	28	45.9	1723	836	48.5
Meghalaya	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA
Nagaland	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA
Orissa	58367	31121	36.4	6233	2208	35.4	854	301	35.2	100863	NA	50.0
Punjab	88132	30875	35.2	2622	866	33.0	209	68	32.5	84138	29389	34.9
Rajasthan	113710	40043	39.9	5257	2014	38.3	1008	377	37.4	109345	54673	50.0
Sikkim	891	356	33.6	0	0	0	95	38	40.0	1099	NA	50.0
Tamil Nadu	109308	36824	34.6	6524	2313	35.4	656	227	34.6	119399	41790	35.0
Tripura	5352	1852	38.8	299	106	35.4	82	28	34.1	5676	2044	36.0
Uttar Pradesh	703294	273229	37.6	65669	24674	37.4	2698	1122	41.5	773980	309511	40.0
Uttarakhand	53988	20319	36.6	3152	1079	37.5	360	119	33.0	61452	34494	56.1
West Bengal	49545	18150	34.3	8563	2953	34.2	720	248	34.4	51423	19762	38.4
Andaman & Nicobar Island	759	261	32.7	67	25	34.4	30	10	33.3	NA	--	--
Chandigarh	162	53	39.4	15	6	37.3	10	3	30.0	NA	--	--
Dadra & NagarHavali	114	45	38.8	0	0	40.0	11	4	36.3	NA	--	--
Daman & Diu	77	30	38.9	0	0	0	20	7	35.0	NA	--	--
NCT Of Delhi	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA	NA
Lakshadweep	58	32	37.6	0	0	0	25	9	36.0	NA	--	--
Pondicherry	913	330	36.1	108	40	37.0	NA	NA	NA	NA	--	--

Sources: *Strengthing of Panchayats in India: Comparing Devolution across States, Empirical Assesment: 2012-13, Indian Institute of Public Administration and Ministry of Panchayati Raj Website (http://www.iipa.org.in/upload/Panchayat_devolution_Index_Report_2012-13.pdf,).*

पंचायत राज के माध्यम से हुए महिला सशक्तीकरण से ग्रामीण महिलायें अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई हैं। उनमें अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत बढ़ी है। उनके व्यक्तित्व में भी परिवर्तन आया है। उनमें आत्मविश्वास एवं जोश बढ़ा है। रचनात्मक कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी बढ़ी है। पंचायती राज संस्थाओं ने महिलाओं के न केवल निर्णय–निर्माण क्षमता में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, बल्कि विकेन्द्रित नियोजन में विकास कार्यक्रम के प्रशासन, क्रियान्वयन एवं नियोजन में सक्रिय सहभागिता प्रदान की है। पंचायती राज ने ग्रामीण क्षेत्र एवं वंचित (दलित) वर्ग की महिलाओं को परिवार, जाति व समाज में उच्च स्थिति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है क्योंकि इनमें बीपीएल एवं कमजोर तबके की महिलायें भी निर्वाचित हो रही हैं। इसलिए उनका सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक सशक्तीकरण हो रहा है।

पंचायतों में सहभागिता से महिलाओं ने शिक्षा के महत्व को पहचाना है, क्योंकि शिक्षा के अभाव में उन्हें इन संस्थाओं में काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। वे स्वयं महसूस करती हैं कि अगर वे शिक्षित होती तो इन संस्थाओं में बेहतर तरीके से कार्य संपादन एवं सहभागिता कर पातीं। उनकी इस सोच ने ग्रामीण क्षेत्र में लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा दिया है, जिसकी आज काफी आवश्यकता है। महिला प्रतिनिधि गरीबी, असमानता, लैंगिक भेदभाव, नशाखोरी, स्वास्थ्य, शिक्षा, घरेलू हिंसा आदि मुद्दों को उठाकर ग्रामीण क्षेत्र में स्थानीय शासन की प्रकृति व दिशा को परिवर्तित कर रही हैं।

73वें एवं 74वें संविधान संशोधनों को महिला सशक्तीकरण के लिए क्रांतिकारी कदम कहा जा सकता है क्योंकि इनके द्वारा पहली बार स्थानीय संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक–तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया है। यह आरक्षण न केवल सदस्यों के स्तर पर बल्कि सरपंच, प्रधान एवं जिला प्रमुखों के पदों पर भी सुनिश्चित किया गया है। स्थानीय स्तर पर महिलाओं के इस राजनीतिक सशक्तीकरण का प्रभाव यह रहा कि इसकी बड़े पैमाने पर प्रगति ने राष्ट्रीय स्तर पर संसद तथा राज्य विधान सभाओं में एक–तिहाई आरक्षण के लिए आधार तैयार किया है। पंचायती राज की सफलता को देखते हुए 9 मार्च 2010 को राज्य सभा ने 108वाँ संविधान संशोधन विधेयक पास किया है, जिसे अभी लोकसभा से पारित होना बाकी है। उम्मीद है कि यह वहाँ भी जल्दी ही पारित हो जायेगा।[19]

उल्लेखनीय है कि 73वें एवं 74वें संशोधन विधेयकों से महिलायें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से सशक्त हुई हैं तथा अब वे राष्ट्रीय स्तर पर भी आरक्षण के लिए तैयार हैं। यद्यपि इन संशोधनों से पूर्व भी कुछ महिलायें इन संस्थाओं में चुनी जाती थीं, किन्तु उनकी संख्या न के बराबर होती थी। जब संसद में इन महिलाओं के आरक्षण सम्बन्धी प्रावधानों पर बहस हुई तो कुछ सदस्यों ने महिलाओं के इतनी बड़ी संख्या में चुनाव लड़ने एवं अन्य बातों को लेकर आशंका व्यक्त की। लेकिन वर्ष 1995 से शुरू हुए चुनावों एवं महिलाओं की सक्रिय भागीदारी ने उन सभी आशंकाओं को गलत साबित कर दिया है।[20] वर्तमान में करीब 12 लाख से अधिक महिलायें पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित होकर अपनी सक्रिय सहभागिता निभा रही हैं। उल्लेखनीय है कि इन ग्रामीण महिलाओं में कमजोर एवं वंचित तबके की महिलाएँ भी शामिल हैं, क्योंकि संविधान में

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

ही अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के लिए एक–तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इस व्यवस्था के कारण इन वर्गों की महिलाएँ इन संस्थाओं में भाग लेकर लोकतंत्र एवं महिला सशक्तीकरण को वास्तविक रूप में साकार कर रहीं हैं। पिछड़े वर्गों की महिलाओं के लिए ऐच्छिक प्रावधान होने के कारण राज्य सरकारों ने भी एक–तिहाई आरक्षण व्यवस्था कर रखी हैं।

इस प्रकार पंचायती राज की महिला सशक्तीकरण में भूमिका देखते हुए राजस्थान, बिहार, केरल सहित कुछ अन्य राज्यों ने महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान कर दिया है। राजस्थान में जनवरी–फरवरी 2010 में हुए पंचायती राज चुनावों में 50 प्रतिशत आरक्षण को क्रियान्वयन किया गया है। उल्लेखनीय है कि अब बिहार जैसे कई राज्यों में महिलाओं की भागीदारी पंचायती राज में 60 प्रतिशत से भी ज्यादा हो गयी हैं, क्योंकि कुछ महिलायें सामान्य (पुरूष योग्य) सीटों पर भी निर्वाचित हो रही हैं। 73वें संविधान संशोधन का अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं को ज्यादा फायदा मिल रहा है, क्योंकि ये सामान्य महिला सीट पर भी निर्वाचित हो रही हैं। यह एक अच्छा कदम है, क्योंकि इन वर्गों की महिलायें ही समाज में ज्यादा पिछड़ी व शोषित रही हैं। इन निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में दलित, आदिवासी, पिछड़ी जाति तथा मुस्लिम महिलायें भी हैं। इन महिलाओं ने सत्ता के जातीय समीकरण को ही नहीं बल्कि सामाजिक और आर्थिक समीकरण को भी बदल दिया है।

पंचायती राज संस्थाओं में महिला प्रतिनिधियों के बारे में एसी. नीलसन ओआरजी मार्ग के अध्ययन से पता चलता है कि पंचायती राज संस्थाओं में बड़ी संख्या में बीपीएल और निरक्षर उम्मीदवार भी हैं। इससे यह भ्रम निर्मूल होता है कि चुनावी राजनीति में धन बल ही काम करता है। राष्ट्रीय राजनीति में भले ही यह अधिक नजर आता है, लेकिन जमीनी स्तर पर राजनीति में भी यह उतना महत्वपूर्ण कारक नहीं बना है। बीपीएल जीवन के लोगों का पंचायतीराज संस्थाओं में आना और विशेषकर महिला बीपीएल उम्मीदवारों की भागीदारी इस बात की सूचक है कि स्थानीय स्तर पर सरकारी कार्यक्रमों और योजनाओं के क्रियान्वयन में सामंती और सवर्णवादी पूर्वाग्रह तथा मनमानी कम हो सकेंगे। यह भारतीय समाज और राजनीति के लिए शुभ लक्षण है।

पंचायती राज संस्थाओं में महिला सशक्तीकरण से न केवल दोपहर का भोजन कार्यक्रम, सर्वशिक्षा अभियान, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम), महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा), खाद्य सुरक्षा अधिनियम आदि के क्रियान्वयन में फर्क पड़ा है बल्कि ग्रामीण महिलायें अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई हैं। भारत सरकार ने भी महिला सशक्तीकरण और कल्याण हेतु राजीव गाँधी किशोरी सशक्तीकरण स्कीम (सबला), इंदिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना, स्वाधार योजना (2001–02), महिला ई–हाट, राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण नीति (2001), सुकन्या समृद्धि योजना, कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना, राष्ट्रीय महिला आयोग, राष्ट्रीय महिला कोष, किशोरी शक्ति योजना, महिला स्वयं सहायता समूह, वर्किंग वुमन हॉस्टल, महिलाओं के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम, नारी शक्ति पुरस्कार, स्वाधार गृह (2002), उज्जवला योजना (2007), राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण मिशन (2010), बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ कार्यक्रम (2015), महिला शक्ति केन्द्र योजना (2017), विकास प्रक्रिया में जेंडर परिप्रेक्ष्य को शामिल करने, कृषि, उद्योग, सेवा व अर्थव्यवस्था में महिला भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु कतिपय महत्वपूर्ण प्रयत्न किये हैं।

उनमें अन्याय, दमन और शोषण के विरूद्ध आवाज उठाने की हिम्मत बढ़ी है। इस तरह ग्रामीण महिलाओं के व्यक्तित्व में भी परिवर्तन आया है। वे अपने आस–पास की घटनाओं के प्रति सजग हुई हैं। ग्रामीण इलाकों में होने वाले रचनात्मक कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी बढ़ी है। उनमें राष्ट्र और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी का भाव भी विकसित हुआ है। कई मामलों में तो महिला पंचायतों के पिता, पति अथवा भाई के हाथ में ही कमान हैं और वे अपनी बेटियों, पत्नियों अथवा बहनों को अपने रिमोट कंट्रोल से संचालित करते हैं तथा उनका अपने फायदे के लिए इस्तेमाल भी करते हैं, लेकिन यह पूरी वास्तविकता नहीं है। कई सर्वेक्षणों से इस भ्रम का भी निराकरण हुआ है। सर्वेक्षणों से तो यह बात भी सामने आयी है कि महिला पंचायतों में साक्षर व जागरूक महिलाओं की भी अच्छी खासी संख्या है और यहाँ तक कि अनुभव का फायदा लेते हुए निरक्षर व अनपढ़ महिलायें भी अपना कार्य अच्छी तरह करती हैं। उनका प्रदर्शन पुरूष प्रतिनिधियों से किसी मायने में कम नहीं हैं।[21] पुरूषवादी मानसिकता के शिकार लोग अक्सर यह तर्क देते रहे हैं कि निरक्षर महिलायें पंचायतों का कामकाज ठीक ढंग से नहीं समझ सकती हैं और वे अपने पतियों द्वारा संचालित 'मोम की गुड़िया' साबित होंगी, लेकिन सर्वेक्षणों के निष्कर्ष इसके उलट हैं जबकि इतिहास गवाह है कि महिलाओं ने हमेशा पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर समाज की तरक्की में सहयोग दिया है। घर–परिवार हो या खेत–खलिहान किसी भी जगह आधी आबादी पीछे नहीं रही है।

भारत सरकार की ओर से लागू किया गया न्यूनतम साझा कार्यक्रम एवं पंचायती राज को आर्थिक व सामाजिक न्याय के दो प्रमुख कार्यों के साथ पूर्ण मंत्रालय का दर्जा दिये जाने से स्थिति और बेहतर हुई है। भारत सरकार लगातार पंचायती राज संस्थाओं को जमीनी स्तर पर मजबूत बनाने के प्रयास में लगी है। ग्रामीण व्यापार केन्द्रों की स्थापना, ई–प्रशासन योजना आदि गाँवों की तस्वीर बदलने लगे हैं। इससे जहाँ गाँवों में जागरूकता आयी है वहीं लोकतंत्र और मजबूत हुआ है। ग्रामीण महिलायें छोटे–छोटे स्वयं सहायता समूहों के जरिये स्वरोजगार अपना रही है और विकास में अपना सहयोग दे रही है। कई स्वयंसेवी संगठनों की मदद से सरकार ग्रामीण महिला प्रतिनिधियों को प्रशिक्षित करने का भी काम कर रही है।

चूंकि अभी देश में नौकरशाही उतनी चुस्त नहीं है, स्थानीय प्रशासन ढीला है और कई राज्यों की वित्तीय स्थिति ठीक नहीं है एवं पंचायतों को अभी वित्तीय अधिकार नहीं मिले हैं। इसलिए पंचायतों के जरिये होती मौन क्रांति का नतीजा अभी उतना आकर्षक नजर नहीं आ रहा है, लेकिन जब संसद और विधान सभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण लागू होगा तो महिला पंचायत प्रतिनिधियों के लिए एक नया राजनीतिक रास्ता खुलेगा और वे उससे आगे बढ़ते हुए संसद तक पहुँचेगी।[22] उनके पास एक नया अनुभव होगा जिसका फायदा नीतियों के निर्धारण में मिलेगा तथा ग्राम सभा से संसद तक के सफर में निश्चित तौर पर आधी दुनिया को इसका फायदा मिलेगा।

चूंकि ग्रामीण महिलायें जीवन के सभी क्षेत्रों में पिछड़ी रहीं हैं, अतः उनके सशक्तीकरण के लिये किये जा रहे प्रयासों की समीक्षा कर अब तक की उपलब्धियों, समस्याओं एवं कमियों का विश्लेषण करते हुए सार्थक एवं उपयोगी सुझावों को अपनाना आवश्यक है। भारत में केन्द्र एवं राज्य सरकारों के विभिन्न प्रशासनिक, वैधानिक, राजनीतिक एवं आर्थिक कार्यक्रमों और योजनाओं के साथ भारतीय पंचायती राज व्यवस्था ने ग्रामीण महिला सशक्तीकरण में उल्लेखनीय योगदान किया है। 73वें संविधान संशोधन के बाद ग्रामीण महिला सशक्तीकरण के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन आया। इसलिए इस संशोधन से सम्बन्धित प्रावधानों के क्रियान्वयन एवं उनके प्रभावों का विश्लेषण आवश्यक है। तमाम प्रयासों व दावों–प्रतिदावों के बावजूद बार–बार यह प्रश्न उठता है कि क्या ग्रामीण महिलाओं का पंचायती राज से वास्तव में सशक्तीकरण हुआ है?

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

और अगर हाँ तो किस सीमा तक एवं किन अर्थों में? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन पर अब विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि पंचायती राज अधिनियम को लागू हुए दो दशक से भी ज्यादा समय बीत चुके हैं। इसलिए पंचायतों में महिला सशक्तीकरण की दृष्टि से ऐसे प्रश्न लाजमी हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि पंचायती राज ने महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा दिया है किन्तु सशक्तीकरण की मात्रा, क्षेत्र एवं परिस्थितियों के अनुसार भिन्न रही है। जिन पंचायती राज संस्थाओं में महिला प्रतिनिधि स्वयं पंचायत के मामलों को देखती है, निर्णय प्रक्रिया में पूर्ण सक्रियता से भाग लेती हैं और समुदाय के विकास कार्यक्रमों को बाहरी एजेंसियों से सक्रियता से करवा पाती हैं, तो कहा जा सकता है कि उन महिला प्रतिनिधियों का पूर्ण सशक्तीकरण हुआ है। दूसरी ओर अगर महिला प्रतिनिधि अपने घर से स्वतन्त्र रूप से बाहर नहीं आती, घूँघट नहीं हटा पातीं और अपने पति या सम्बन्धी के कहने पर ही दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करती हैं, तो कहा जा सकता है कि उन महिला प्रतिनिधियों का सशक्तीकरण नहीं हुआ है। भारत में पंचायती राज संस्थाओं में अभी भी ये दोनों ही स्थितियाँ देखने को मिलती हैं। इस प्रकार सशक्तीकरण का परिणाम विभिन्न स्थानों एवं परिस्थितियों में भिन्न रहा है।

वर्तमान में यह प्रवृत्ति देखने को मिल रही है कि पंचायत राज की महिला प्रतिनिधि अकेले सार्वजनिक क्षेत्रों एवं अपने कार्यालयों में जाने लगी हैं, पुरूष प्रतिनिधियों के साथ कुर्सियों पर बैठने लगी हैं, सार्वजनिक चर्चाओं में हिस्सा लेने लगी हैं और ये सभी कदम उनके सशक्तीकरण को बढ़ावा दे रहे हैं। निकट भविष्य में पंचायती राज में महिलाओं की सहभागिता से ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता एवं शिक्षा को बढ़ावा मिलेगा। इसी प्रकार शैक्षिक सशक्तीकरण होने से अगली पीढ़ी की महिला प्रतिनिधि बेहतर शिक्षित रहेंगी और पंचायत के मामलों को बेहतर तरीके से संभाल पायेंगी। उल्लेखनीय है कि महिला पंचायत प्रतिनिधियों को अन्य ग्रामीण महिलाओं से परिवार, भूमि, रोजगार एवं आवास से सम्बन्धित विभिन्न वाद–विवाद की याचिकाएँ मिलती हैं।[23] पंचायत की नवीन महिला प्रतिनिधि इन सबको सुलझा तो नहीं पाती किन्तु इससे वे सार्वजनिक जीवन के नये अनुभवों से अवगत होती हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण हो रहा है।

महिलाओं के प्रति हमारे रूख में बदलाव की जरूरत है। पिछले दो दशकों के दौरान महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाने के लिए महत्वपूर्ण उपाय किये गये हैं, फिर भी और अधिक उपायों की जरूरत है। महिला सशक्तीकरण के स्तम्भों में साक्षरता, शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ तथा माँ और बच्चों के लिए पौष्टिकता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा स्वरोजगार के अवसर सहित वित्तीय सुरक्षा शामिल हैं ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें। ये सारे काम महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जाकरूक बनाने, उन्हें महिला होने का गर्व होने, प्रेरक माहौल बनाने तथा गरिमापूर्ण जीवन जीने का सुअवसर प्रदान करने पर ही पूरे हो सकेंगे। अक्सर यह देखा जाता है कि महिलाओं को कम मजदूरी वाले काम दिये जाते हैं और विकास के जैसे अवसर पुरूषों को मिलते हैं, उन्हें नहीं मिल पाते। जब कभी भारतीय महिलाओं को अनुकूल माहौल और सही सुविधाएँ मिली हैं वे सफल हुई हैं।

महिलाओं की शिक्षा तथा अधिकारिता विकास एवं गरीबी उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। राज्य सरकारों को ऐसी योजनाएँ लागू करनी चाहिए, जो बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करें। इससे स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छोड़ने वाली बालिकाओं की संख्या में भी कमी आयेगी। घरेलू हिंसा तथा सामाजिक भेदभाव कम करने के लिए एक समुचित सामाजिक एवं कानूनी माहौल बनाने की जरूरत है इसके लिए समाज के सभी वर्गों, सामाजिक संगठनों, मीडिया तथा सरकार को मिलकर कोशिश करनी चाहिए। हमारी नीतियाँ व कार्यक्रम भी ऐसे होने चाहिए जो महिलाओं की जरूरतों तथा हितों को ध्यान में रखकर तैयार हों। महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों द्वारा ऋण सुविधा देकर अपना कारोबार शुरू करने के लिए मदद दी जानी चाहिए। ये उपाय महिलाओं को आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त करने में मदद पहुँचायेंगे तथा उनकी अधिकारिता में योगदान करेंगे।[24] हमारा मकसद होना चाहिए कि महिलाओं को काम करने का ज्यादा से ज्यादा अवसर दें तथा ऐसा माहौल बनायें जिसमें महिलायें सम्मान एवं गरिमा के साथ रह सकें उनका सशक्तीकरण हों और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें। एक राष्ट्र के रूप में हमारी पूरी क्षमता का उपयोग तभी हो सकेगा जब महिलाएँ, जो हमारी आबादी का करीब आधा हिस्सा हैं, अपनी पूरी क्षमता का उपयोग कर सकें। जब तक ऐसा नहीं होता है, प्रतिभा का आधा हिस्सा, प्रगति का आधा भाग बर्बाद होता रहेगा। एक राष्ट्र के रूप में हम लोग इस बर्बादी को बर्दास्त नहीं कर सकते। जिस तरह एक रथ के आगे बढ़ने के लिए उसके दोनों पहियों के आगे चलने की जरूरत होती है उसी तरह पुरूषों और महिलाओं को संयुक्त रूप से मजबूत होने और आगे बढ़ने की जरूरत है।

पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व विकास की चुनौतियाँ

हालाँकि एक लम्बे संघर्ष के दौरान पंचायत स्तर पर सत्ता के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया लागू हो गयी है तथा कतिपय मामलों में ग्रामीण नागरिकों को इसका लाभ भी मिला हुआ है किन्तु अभी भी बहुत सारे क्षेत्रों में प्रक्रियात्मक बाधाओं की चिंता करने की जरूरत है। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि एक तरफ आर्थिक उदारीकरण व वैश्वीकरण के युग में पूरी दुनिया परिवर्तन के दौर से गुजर रही है, सूचना प्रौद्योगिकी और ज्ञान आधारित नये–नये नेटवर्कों की जरूरत बढ़ रही है, किन्तु अभी भी स्वाधीनता के 6 दशकों के बाद भी ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत ढाँचों के विकास में कमी के कारण स्थिति में कोई खास बदलाव नहीं हो पाया है। कतिपय क्षेत्रों में तो न साक्षरता में वृद्धि हुई है और न ही लोगों के रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा व जीवन स्तर में ही कोई सुधार हो पाया है। लोग अभी भी निम्नतर जीवन स्तर जीने को विवश हैं। उसमें भी ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर बेहतर बनाने तथा पंचायतों में उनको प्रतिनिधित्व देकर जिस बदलाव की अपेक्षा की गयी थी वैसा नहीं हो पाया है। राजनीति में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मामले में अभी भी बहुत सी बाधाएँ हैं, इसमें गरीबी, शिक्षा व जागरूकता की कमी, समाज का पितृ सत्तात्मक स्वरूप, वित्तीय संसाधनों व स्वतन्त्रता की कमी और राजनीतिक अधिकारों के बारे में जागरूकता की कमी, जो स्वतन्त्र निर्णय लेने के लिए महिलाओं की क्षमता बाधित करती हैं, शामिल हैं। भारतीय समाज में प्रचलित चरम लिंग–पूर्वाग्रह के कारण महिला सशक्तीकरण अच्छी तरह से सफल नहीं हो सकता है। ग्रामीण महिलाओं द्वारा पंचायतों के कुशलतम ढंग से क्रियान्वयन में उपस्थित कतिपय चुनौतियों का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता हैः–

1– पुरूष प्रधान संस्कृति एवं सामाजिक संरचनायें

पुरूष प्रधान संस्कृति एवं सामाजिक संरचनाएँ ग्रामीण भारत में पंचायतों के माध्यम से स्थानीय शासन में महिला सहभागिता को प्रभावित करती हैं। अब भी कुछ परिवार अपनी महिलाओं को पंचायतों में काम करने की स्वीकृति नहीं देते, क्योंकि वे महिला का स्थान घर में समझते हैं, पंचायत में नहीं। पारंपरिक परिवार महिलाओं की स्वतन्त्रता को उचित नहीं समझते।

उत्तर प्रदेश, राजस्थान एवं कुछ अन्य राज्यों में अब भी महिला प्रतिनिधियों के पति ही उनका काम सँभालते हैं। इस कारण उनके लिए

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

सरपंच पति या प्रधान पति जैसे शब्द प्रयोग में लाये जाते हैं। ये लोग ही पंचायत प्रतिनिधि के रूप में महिला का सारा कार्य करते हैं। उनका कार्य चुनाव लड़ने की प्रक्रिया से ही शुरू हो जाता है। वे ही चुनावों में वोट माँगते हैं, प्रचार करते हैं, एजेंट बनाने एवं मतगणना तक की व्यवस्था अपनी निगरानी में करवाते हैं, महिला उम्मीदवार एवं प्रतिनिधि केवल हस्ताक्षर करती हैं। उनकी तरफ से सारे वायदे एवं योजनाएँ उनके पति ही जनता के सामने पेश करते हैं। सच तो यह है कि मतदाता भी उनके 'पति' की साख, योग्यता, ईमानदारी एवं राजनीतिक प्रभाव को देखते हुए मतदान करती है। ये पति ही जीतने के बाद महिला को बैठकों आदि आवश्यक कार्यों में अपने साथ ले जाते हैं। उनके 'हाँ' या 'ना' के आधार पर ही महिला किसी प्रस्ताव या अन्य प्रशासनिक कार्यों एवं आदेशों पर हस्ताक्षर करती हैं। कुछ मामलों में पुरूष परोक्ष रूप से सत्ता बनाये रखने के लिए इस प्रकार से आरक्षित सीटों पर चुनाव लड़ने के लिए अपनी पत्नियों को मनाते हैं, पर जमीनी हकीकत यह है कि पर्याप्त संख्या में पंचायत चुनाव जीतने वाले उम्मीदवार पुराने सत्ता धारकों के मोर्चा मात्र हैं। यदि आरक्षित सीट एक महिला के लिए है तो यह आमतौर पर पुराने सरपंच की पत्नी या बहू है जो सिर्फ कागजात पर हस्ताक्षर करने के लिए है, जबकि पति या ससुर सब व्यापार सम्भालते हैं।

एक और मुद्दा परिवार में श्रम का लिंग आधारित विभाजन है, जहाँ महिलायें घर के सभी काम कर परिवार की देखभाल करना, ईंधन–चारा और पानी लाना और साथ ही बच्चों के पालने का काम करती हैं। निर्वाचित महिला पंचायत सदस्यों को आमतौर पर एक पत्नी होने के नाते घर चलाने और परिवार का समर्थन करने के लिए पूरा समय काम करने के अलावा उनकी राजनीतिक भागीदारी के बोझ के बारे में शिकायत होती है। इसके अलावा पुरूषों को घर में कोई काम नहीं करना होता है, उनके पास राजनीति के लिए बहुत अधिक समय होता है। राजनीतिक प्रणाली में प्रवेश करने के लिए महिलाओं को प्रोत्साहित करते समय उनके भाग लेने के लिए जरूरी समय के लिए प्रावधान करना चाहिए।

2– चक्रानुक्रम आरक्षण व्यवस्था में कमियाँ

चक्रानुक्रम आरक्षण व्यवस्था भी कुछ मामलों में महिला हितों के विरूद्ध हैं। इसमें किसी चुनाव में एक–तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित होते हैं, किन्तु अगले चुनाव में वे उस वर्ग की महिलाओं के लिए आरक्षित नहीं रहते, उन्हें बदल दिया जाता है। ऐसी स्थिति में पहले वाले चुनाव में निर्वाचित महिला के लिए अपना क्षेत्र बदलना अनिवार्य हो जाता है। ऐसे में उन्हें पिछले कार्यकाल में करवाये गये विकास कार्यक्रमों का फायदा नहीं मिलता। उन्हें न केवल नये क्षेत्र में चुनाव जीतने के लिए व्यवस्था करनी पड़ती है, बल्कि जीतने के बाद फिर से नये कार्यक्रम शुरू करने पड़ते हैं। इस व्यवस्था से महिला सशक्तीकरण तो प्रभावित होता ही है महिला प्रतिनिधियों के ग्रामीण क्षेत्र में अच्छे काम करने की भावनाओं को भी ठेस पहुँचाती हैं।

3– ग्रामीण महिला साक्षरता का न्यून प्रतिशत

पंचायती राज संस्थाओं में महिला नेतृत्व विकास के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती ग्रामीण स्तर पर महिलाओं का न्यून साक्षरता प्रतिशत है। न्यून साक्षरता का कम प्रतिशत एक ऐसा सच है जो ग्रामीण महिलाओं के नेतृत्व क्षमता व उनके सशक्तीकरण को सबसे ज्यादा प्रभावित करता है। एक बड़े प्रयासों के बाद वर्तमान में भारत की कुल महिला साक्षरता 64.6 प्रतिशत है जबकि पुरूष साक्षरता 80.9 प्रतिशत तथा कुल साक्षरता 73.0 प्रतिशत है, (2011 के अंतिम आँकड़ों के अनुसार)। हालाँकि पिछली जनगणना के मुताबिक महिला साक्षरता में वृद्धि हुई है किन्तु इसे बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता। महिला साक्षरता कम होने का दुष्परिणाम न केवल पंचायती राज संस्थाओं की कार्यकुशलता पर पड़ता है बल्कि केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा प्रवर्तित विभिन्न कल्याणकारी परियोजनाओं पर भी इसका असर पड़ता है। परिणामतः उचित जानकारी के अभाव में वे इन परियोजनाओं का लाभ नहीं उठा पाते।[24] न्यून साक्षरता के ही कारण पंचायत के निर्वाचनों में जातीय राजनीति भी हावी हो जाती है। परिणामस्वरूप जन प्रतिनिधियों का स्वस्थ निर्वचन नहीं हो पाता। न्यून साक्षरता के कारण ही ग्रामीण महिला पंचायत प्रतिनिधियों को पंचायत पर सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी नहीं हो पाती, परिणामतः उनके कार्यों का संपादन उनके पति लोग करते हैं, महिला प्रतिनिधि मात्र हस्ताक्षर करने वाली कार्टून बनकर रह जाती हैं।

4– पंचायतों को सत्ता का वास्तविक हस्तांतरण नहीं

हालाँकि 73वें संविधान संशोधन द्वारा शासकीय विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को अपनाते हुए पंचायतों को संविधान के प्रावधानों के तहत एक सुदृढ़ संवैधानिक आधार दिया गया है। अनुच्छेद 243(छ) के अधीन पंचायत राज संस्थाओं को 29 विषयों पर काम करने का स्वतन्त्र अधिकार दिया गया है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 243(झ) के तहत वित्तीय स्थिति के पुनर्विलोकन हेतु राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है। किन्तु प्रायः देखा गया है कि पंचायतों का राजकोषीय स्वायत्तता प्राप्त करने की दिशा में बहुत कम विकास हुआ है। वित्त आयोग की सिफारिशों के संदर्भ में वह जो भी धनराशि प्राप्त कर रहे हैं, जुड़ी शर्तों के साथ पाते हैं। क्योंकि राज्य वित्त आयोग के गठन तथा उनके माध्यम से धन आवंटन में राज्य सरकारें पक्षपात करती हैं। इसके अलावा राज्य सरकारों द्वारा पंचायतें जो भी वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराये गये हैं वे अपर्याप्त हैं। उनके पंचायतों के पर्याप्त आय की कल्पना नहीं की जा सकती। इस सम्बन्ध में पहले से ही राज्य केन्द्र सरकार के आगे अपनी तंग वित्तीय हालत के लिए रोना रोते रहते हैं। ऐसी हालत में पंचायतों से यह अपेक्षा करना कि वे अपने अत्यन्त सीमित संसाधनों के बल पर ग्रामीण क्षेत्र का विकास करेंगे, काफी कठिन है। वस्तुतः अनुच्छेद 243(छ) के तहत पंचायतों के जिन 29 विषयों पर कार्य करने का अधिकार दिया गया है उन्हीं विषयों पर राज्य सरकारें भी काम करती है। परिणामतः कार्यों और उस पर आने वाली लागत को लेकर पंचायतों एवं राज्य सरकारों में विवाद होना स्वाभाविक है।[25] ऐसी स्थिति में प्रायः देखा गया है कि राज्य सरकारें पंचायतों की सहायता नहीं करतीं।

5– पंचायत स्तर पर जातिवाद की प्रबलता

उल्लेखनीय है कि भारतीय राजनीति में जाति हमेशा केन्द्रीय भूमिका में रही है। यहाँ तक कि भारत की सामाजिक व्यवस्था में भी यह एक निर्णायक भूमिका में रही है। हालाँकि विभिन्न धार्मिक आंदोलनों व समाज सुधार के कार्यक्रमों में जातिवाद को एक सामाजिक बुराई मानकर इसे समाप्त किये जाने पर बल दिया जाता रहा है किन्तु पिछले कई दशकों के परिदृश्य से तो यही निहितार्थ निकलता है कि जातिवाद की समस्या सुलझने के बजाय और उलझती जा रही है। वर्तमान में तो यह समस्या भारतीय राजनीति में एक बड़ा नासूर बनकर उभरा है। न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर भी यह समस्या एक विकराल रूप धारण करती जा रही है। जाति के आधार पर ही न केवल प्रत्याशियों का चयन करके चुनाव लड़ा जाता है बल्कि चुनाव के पश्चात् भी उनकी ज्यादातर क्रियाविधि व विकास योजनाओं को आम आदमी के हित तक पहुँचाने में भी जातिगत समीकरणों को भी ध्यान में रखा जाता है। उच्च तथा सम्पन्न वर्ग की महिलायें निम्न एवं वंचित वर्ग की महिलाओं के अधीन कार्य करने की इच्छा नहीं रखती हैं। अगर पंचायत के मुखिया पद पर इन कमजोर वर्गों की महिलायें आरक्षण के कारण चुन ली जाती हैं तो कई समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। निर्णय लेते समय सभी स्तरों पर इन महिलाओं की राय पर ध्यान नहीं दिया जाता।[26] तथाकथित सवर्ण मानसिकता और उच्च वर्ग के लोग वंचित (दलित) व पिछड़े वर्ग की महिलाओं का सहयोग नहीं करते तथा उनकी कामकाज करने की

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

शैली व तौर–तरीकों पर प्रश्न चिन्ह लगाकर कटाक्ष करते हैं। पिछले कई वर्षों में राष्ट्रीय स्तर पर भी चुनावों में जिस तरह जाति एक प्रधान भूमिका के रूप में उभरी है उसका सीधा असर पंचायतों पर भी पड़ा है।

6–पंचायत/स्थानीय स्तर पर निर्धनता का व्यापक प्रसार

स्वतन्त्रता के 66 वर्षों के बाद भी भारत में गरीबी व निर्धनता प्रगति एवं विकास के मार्ग में एक बड़ी चुनौती है। उसमें भी शहरों की अपेक्षा ग्रामीण स्तर पर गरीबी का प्रतिशत कुछ ज्यादा ही है। ग्रामीण स्तर पर कृषि ही लोगों की आय का सबसे बड़ा साधन है उसमें भी भारतीय कृषि की मानूसन पर निर्भरता, अतिवृष्टि, अनावृष्टि तथा सूखा जैसी प्राकृतिक आपदायें बीच–बीच में ग्रामीण जन–जीवन को ज्यादा प्रभावित करती रहीं हैं। जिसके कारण कृषि व विभिन्न कृषि उत्पादों पर निर्भर रहने वाली ग्रामीण जनता के लिए जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करना काफी कठिन हो जाता है। उसमें भी वैश्विक आर्थिक मंदी के कारण बढ़ती मँहगाई के कारण ग्रामीण जनता के जीवन को और भी कठिन बना देती है। ऐसी परिस्थिति में ग्रामीण स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं से यह अपेक्षा करना कि उसके निर्वाचित प्रतिनिधि जन अपेक्षाओं की कसौटी पर खरे उतरेंगे, व्यर्थ प्रतीत होता है। हालाँकि विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं और जन जागरूकता वाले कार्यक्रमों को चलाकर सरकार ने देश के अन्दर व्यापक पैमाने पर व्याप्त गरीबी को दूर करने का प्रयास किया है, किन्तु योजना आयोग के आँकड़ों के अनुसार देश की 29.8 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी गरीबी रेखा के नीचे के जीवन स्तर पर अपना जीवन व्यातीत करने को विवश है। अन्त्योदय अन्न योजना, खाद्य सुरक्षा अधिनियम, महात्मा गाँधी नरेगा आदि योजनाओं के माध्यम से सरकार द्वारा देश की निर्धन व गरीब जनसंख्या के लिए चलायी गयी योजनाओं के माध्यम से गरीबी दूर करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु इन योजनाओं में बड़े स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण स्थिति में कोई खास बदलाव नहीं आया है।

7–जनप्रतिनिधियों में सच्चरित्रता एवं नैतिकता का ह्रास तथा अपराधीकरण को बढ़ावा

सच्चरित्रता एवं नैतिकता की प्रवृत्ति से जन प्रतिनिधियों में जनसेवा की प्रवृत्ति का विकास होता है। ऐसी भावना रखने वाले जनप्रतिनिधि अपने को जनता से श्रेष्ठ नहीं बल्कि जनता का सेवक समझते हैं। उल्लेखनीय है कि देश की स्वाधीनता के तत्काल बाद के समयों में देश के अन्दर ऐसे नेताओं/जनप्रतिनिधियों की एक बड़ी संख्या थी जिनमें सच्चरित्रता की प्रवृत्ति विद्यमान थी किन्तु समय बीतने के साथ–साथ जनप्रतिनिधियों में जनसेवा की भावना क्षीण होती गयी। उनके मध्य राष्ट्रप्रेम मात्र एक दिखावा बनकर रह गया तथा जनता के प्रति उनका प्रेम व संवेदनशीलता धीरे–धीरे समाप्त होती चली गयी। इसका प्रभाव राष्ट्रीय राजनीति से लेकर पंचायत तक परिलक्षित हुआ। गाँव की गरीब जनता के विकास के लिए जो योजनायें सरकार की ओर लांच की गयीं वे भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गयी तथा जनता के वास्तविक लाभार्थी को इसका लाभ मिलना दूभर हो गया। भारत के युवा प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने अपने एक वक्तव्य में इस बात को जनता के सामने बखूबी स्वीकार किया था कि ''सरकार द्वारा गरीबी उन्मूलन योजनाओं के लिए आवंटित एक रूपये में से मात्र 15 पैसे ही गरीब लोगों तक पहुँच पाते हैं'', स्वतन्त्रता के बाद के भारत का एक ऐसा सच है जिसे किसी देश के प्रधानमंत्री ने पहली बार सार्वजनिक मंच से स्वीकार किया।[27]

सच्चरित्रता एवं नैतिकता के ह्रास का दूसरा परिणाम यह है कि इससे राजनीति में अपराधीकरण को बढ़ावा मिलता है। यह अपराधीकरण भी वर्तमान भरतीय राजनीति की एक वास्तविक सच्चाई है और इसमें इससे भी बड़ा आश्चर्य तो तब होता है जब आम जनता में ऐसे लोगों को वोट तथा सपोर्ट मिलता है। अपराधीकरण की यह प्रवृत्ति वर्तमान समय में राष्ट्रीय राजनीति से लेकर पंचायत स्तर तक व्याप्त होती जा रही है। यह एक आम धारणा होती जा रही है कि अपराध करो, पहचान बनाओ उसके बाद जेल के अन्दर से या छूटने पर बाहर से चुनाव लड़ो।

राजनीति के अपराधीकरण से राजनीति में महिलाओं की भागीदारी पर एक नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। इसके अलावा यदि महिला प्रतिनिधियों का पंचायत संस्थाओं के लिए चुनाव हो जाता है तो भी उन्हें उत्पीड़न और भौतिक खतरों सहित कई अन्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः यह कहना उपयुक्त होगा कि हिंसा और बलात्कार के भय से मुक्ति महिलाओं की इस संस्था के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है।

8–पुरानी सामाजिक परम्परायें व रीति–रिवाज

ग्रामीण स्तर पर अभी भी कतिपय समाजों में महिलाओं के लिए पुराने सामाजिक सरोकार व रीति–रिवाज व परम्परायें लागू होती हैं। ऐसे परिवारों में आज भी महिलाओं का घर से बाहर निकलना दुर्लभ है। समाज में व्याप्त पर्दा प्रथा व पुराने रीति–रिवाज के चलते महिलायें विकास प्रक्रिया में पूर्ण भागीदारी नहीं कर पातीं। ग्रामीण महिला प्रतिनिधियों को विशेष रूप से कमजोर वर्गों की महिलाओं को परिवार के पालन–पोषण के लिए कृषि कार्य अथवा मजदूरी भी करना पड़ता है, इस वजह से वे पंचायतों की बैठकों में भाग नहीं ले पातीं और यदि वे किसी तरह भाग भी लेती हैं तो प्रशासनिक नियमों एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं से अनभिज्ञ होती हैं। उनकी इस कमजोरी का फायदा पंचायती राज व्यवस्था में कार्य करने वाले कार्मिक उठाते हैं।[28] ये कार्मिक ही रिकार्ड एवं लेखों का सार–संभाल करते हैं। ऐसे कई मामले हुए हैं जिनमें ग्रामीण महिलाओं की अज्ञानता का फायदा उठाकर कार्मिक पंचायतों की मदों में फेरबदल कर घपलेबाजी करते रहे हैं।

कुछ राज्यों के पंचायत उम्मीदवारों के लिए 'दो बच्चों' का ही प्रावधान है। इनसे ज्यादा बच्चे पैदा होने पर उन्हें उम्मीदवारी के लिए अयोग्य माना जाता है। इस व्यवस्था से भी ग्रामीण महिलायें ज्यादा प्रभावित होती हैं, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को उनके बच्चे निर्धारित करने का अधिकार नहीं रहता है। इस बारे में निर्णय उनके पति या परिवार वाले ही लेते हैं।

भविष्य की संभावनाएँ एवं अच्छे संकेत

महिलाओं के राजनीतिक भागीदारी और सशक्तीकरण के मुद्दे को मात्र राजनीतिक अधिकारों तक सीमित नहीं किया जा सकता है, शिक्षा, सामाजिक जागरूकता और आर्थिक शक्ति इसके महत्वपूर्ण और बुनियादी घटक हैं। आर्थिक और राजनीतिक शक्तियाँ साथ–साथ चलती हैं, यही कारण है कि समाज में प्रारम्भ से ही पुरूषों का वर्चस्व रहा, क्योंकि उनके पास आर्थिक व राजनीतिक दोनों शक्तियाँ थीं। पुरूष वर्चस्व वाले संस्थानों में पैठ बनाने के लिए उन्हें पुरूषों के साथ बराबरी के स्तर पर संघर्ष करने की जरूरत है, क्योंकि वह आर्थिक रूप से वंचित हैं और आर्थिक संसाधनों तक उनकी पहुँच नहीं है। स्वाधीनता के 7 दशकों के बाद भी महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण एक दूर का सपना बना हुआ है। देखा गया है कि बार–बार केवल कुछ महिलायें राजनीतिक शक्ति के रूप में अपना स्थान बना पाती हैं, वे आम तौर पर ज्यादातर अच्छे परिवारों/घरानों की महिलायें हैं या तो वरिष्ठ नेताओं की पत्नियाँ, विधवाएँ, बेटियाँ आदि हैं। जो धन बल व विभिन्न हथकंडों को अपनाकर राजनीति में अपना स्थान बनाती हैं। इसी कारण से महिला सशक्तीकरण की एक कार्यसमूह की रिपोर्ट ने यह सुझाव दिया था कि चुनाव सुधारों द्वारा संसद, राज्य विधान सभाओं, शहरी स्थानीय निकायों और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव लड़ने के लिए यह आवश्यक है कि महिलाओं को राज्य द्वारा वित्त पोषण प्रदान करना चाहिए।[29]

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

राजनीतिक दल प्रायः देखा गया है कि वे केवल अपने घोषणापत्रों में महिलाओं के कल्याण के लिए काम करने का वादा करते हैं, लेकिन वास्तविक व्यवहार कुछ और ही होता है। उनकी राजनीति में महिलाओं की बराबरी की भागीदारी के मुद्दे में कोई दिलचस्पी नहीं है। संसद में महिलाओं के 33 प्रतिशत आरक्षण के लिए कुछ पार्टियों के विरोध ने न केवल इन पुरूष नेताओं के पितृसत्तात्मक विचारों को दिखाया, बल्कि संसद और विधान सभाओं में महिलाओं की अधिक भागीदारी के लिए संकल्प और आंदोलन को और अधिक मजबूत बना दिया है।

महात्मा गाँधी जी ने कहा है, ''सही लोकतंत्र व्यक्तिगत आजादी पर आधारित होता है'', और इस सोच को साकार करने का कार्य लैंगिक समानता को महत्व प्रदान करके किया जाना चाहिए। केवल समान भागीदारी एवं नेतृत्व के माध्यम से ही कारगर अधिशासन हासिल किया जा सकता है। इस देश में पंचायती राज के 25 वर्षों में राजनीति में भागीदारी की दृष्टि से महिलाएँ ताकतवर समूह के रूप में उभरी हैं। आंध्रप्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, केरल, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओड़िसा, राजस्थान, त्रिपुरा, उत्तराखंड, पश्चिम बंगाल तथा असम जैसे अनेक राज्य महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण के पक्ष में कानून पहले ही पारित कर चुके हैं।

पंचायत के चुने हुए प्रतिनिधियों में महिलाओं के लिए आरक्षण से 1993 के बाद चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि हुई है। नवीनतम उपलब्ध सांख्यिकी के अनुसार, पंचायती राज संस्थाओं में कुल चुने हुए प्रतिनिधियों में चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों (ईडब्ल्यूआर) का अनुपात 36.75 प्रतिशत है।

भारत सरकार का पंचायती राज मंत्रालय विभिन्न प्रकार के मंचों एवं माध्यमों की पहचान करने का प्रयास कर रहा है जिनके माध्यम से महिलाएँ उन मुद्दों को उठा सकें जो उन्हें प्रभावित करते हैं। हालाँकि यह सच है कि महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित होने से राज्य सरकार के स्तर पर अपने सरोकारों को व्यक्त करने में उन्हें मदद मिलेगी, परन्तु ग्राम सभा की बैठकों तथा इस तरह की अन्य बैठकों में अन्य आम महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। यदि महिलाओं से संबंधित मुद्दे पंचायती राज संस्थाओं के सरोकार हैं तो इन बैठकों में आम महिलाओं की उपस्थिति अधिक जरूरी है।

आज चुनाव लड़ने एवं जीतने के बाद लगभग 1.5 मिलियन महिलाएँ जन प्रतिनिधि हैं। इतने बड़े पैमाने पर महिलाओं का राजनीतिक एवं सामाजिक सशक्तीकरण विश्व में अभूतपूर्व एवं अद्वितीय है। भारत में चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों की संख्या शेष विश्व में उनकी कुल संख्या से अधिक है। इस सामाजिक–आर्थिक सशक्तीकरण तथा प्रचुर मात्रा में सफल महिला स्वयं सहायता समूह की मुहिम के आधार पर हम अपने देहाती इलाकों में अभूतपूर्व विशालता वाली एक लैंगिक क्रांति देख सकते हैं। यह बड़े ही गर्व की बात है कि यह क्रांति बड़े सामंजस्य एवं तालमेल के साथ घटित हो रही है।

हमारी पंचायतों में महिलाओं का राजनीतिक एवं सामाजिक सशक्तीकरण पिछले दशक में भारत की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक है। एक ही झटके में ग्रामीण भारत की एक मिलियन से अधिक महिलाएँ रसोई की चारदीवारी से आजाद हो गई हैं तथा ग्राम समुदाय में प्राधिकार एवं जिम्मेदारी के पदों पर आसीन हो गई हैं। ब्लाक एवं जिला स्तरों पर भी, उन्होंने पद ग्रहण किया है तथा न केवल चुनाव लड़ना सीखा अपितु लोगों के व्यापक हित में अपने मताधिकार का प्रयोग भी किया है। वास्तव में आज चुनी जाने वाली महिलाओं का अनुपात आरक्षित कोटा से बहुत अधिक है तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाएँ अगड़ी जातियों की महिलाओं की तुलना में अक्सर अधिक सीटें प्राप्त कर रही हैं।

अभी भी ऐसी निकट समस्याएँ हैं जिनका समाधान करने की जरूरत है। अनेक महिलाएँ अवसर के अनुरूप ऊपर उठने में संकोच एवं झिझक महसूस करती हैं। महिलाओं के कंधों पर जिम्मेदारी एवं सत्ता का बोझ होने के बावजूद अक्सर गाँव के पुरूष उनका उपयुक्त ढंग से आदर एवं सम्मान नहीं करते हैं। सत्ता का कारगर वितरण इतना असमान एवं अपर्याप्त है कि इसकी वजह से महिलाएँ असहाय एवं पंगु महसूस करती हैं तथा पंचायती राज संस्थाएँ निष्प्रभावी हो जाती हैं। चुने जाने पर महिला प्रतिनिधियों का एक बड़ा वर्ग ऐसा होता है जो पहली बार सार्वजनिक क्षेत्र में कदम रखता है, उनमें से कुछ के पास औपचारिक शिक्षा का अभाव होता है। तथा उन्हें अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक बाधाओं का सामना करना पड़ सकता है जिसकी वजह से वे पंचायतों में पूर्ण भागीदारी नहीं कर पाती हैं। परिणामतः चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों में क्षमता निर्मित करने एवं आत्मविश्वास पैदा करने की रणनीतियों पर विशेष ध्यान दिया गया। ग्राम सभा स्तर पर महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा अनेक संकेतकों पर विचार किया गया है। ग्राम सभा की बैठकों का समय दिन के सुविधाजनक समय पर निर्धारित किया जा रहा है तथा लोकप्रिय रूचि के विषयों जैसे कि प्राथमिक विद्यालय, मध्याह्न भोजन, पेयजल, मल व्ययन प्रणाली, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, जच्चा एवं बच्चा देखभाल, आँगनबाड़ी एवं टीकाकरण पर चर्चा की जा रही है। चूँकि महिलाएँ इन मुद्दों को अभिव्यक्त करने के लिए बेहतर स्थिति में होती हैं, इसलिए ग्रामसभा की बैठकों में उनकी भागीदारी अधिक उपयोगी साबित होगी और इस प्रकार इन बैठकों में भाग लेने के लिए अधिक आम महिलाएँ प्रोत्साहित होंगी।[30]

विभिन्न महिला सभाओं का आयोजन जमीनी स्तर पर काफी कारगर साबित हुआ है तथा यह कि इन बैठकों में महिलाओं की भागीदारी ग्राम सभाओं में उनकी भागीदारी से काफी अधिक रही है। इसके अलावा, महिला सभाएँ विशेष रूप से ऐसे मुद्दे उठाती हैं जो महिलाओं के लिए संवेदनशील होते हैं, जैसे कि दहेज, घरेलू हिंसा, पदार्थ दुरूपयोग, सार्वजनिक स्थान पर हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या तथा महिलाओं एवं बच्चों का दुर्व्यापार आदि। महाराष्ट्र महिला सभा की बैठकों का आयोजन करने वाला पहला राज्य है। जिसके बाद राजस्थान, ओड़िशा एवं कर्नाटक ने यह कार्य किया है। इसलिए आधी आबादी के सशक्तीकरण के लिए प्रारंभ की गई इस लैंगिक क्रांति के सच्चे स्वरूप को समझने की नितांत आवश्यकता है जो जो पूरे देश में छा रही है। क्योंकि हमारी पंचायतों में महिलाओं की भूमिका को समझने के लिए समग्र एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की बजाय घटनाओं से प्रभावी ढंग से सामान्यीकरण की संभावित प्रवृत्ति मौजूद है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

सांख्यिकी से पता चलता है कि 35 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओं के निष्पादन की तुलना में 21–35 आयु वर्ग की महिलाओं का निष्पादन बेहतर है। यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि राजनीति में शामिल होने के लिए जवान महिलाओं को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। प्रशिक्षण प्रदान करना चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों के निष्पादन के एक महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में उभरा है। इसलिए सभी चयनित सदस्यों के लिए प्रशिक्षण को न केवल अनिवार्य किया जाना चाहिए, अपितु नियमित रूप से इसका आयोजन भी किया जाना चाहिए। इसके तहत प्रशासन के अनेक आयाम शामिल होने चाहिए, जैसे कि नियम एवं विनियम, बजट निर्माण एवं वित्त तथा विकास योजनाओं का कार्यान्वयन आदि।

महात्मा गाँधी का कहना था कि–''महिलाओं को अबला कहना अपराध है, यह महिलाओं के प्रति पुरूषों द्वारा अन्याय है। यदि ताकत की दृष्टि से इसका अभिप्राय नैतिक बल से है, तो महिलाएँ पुरूषों से अपरिमित रूप से श्रेष्ठ होती हैं। क्या उनमें अधिक आत्म बलिदान नहीं होता है, क्या उनमें सहिष्णुता की अपार शक्ति नहीं होती है, क्या उनके अधिक साहस नहीं होता है? उनके बिना पुरूष नहीं हो सकते हैं। यदि अहिंसा हमारे जीवन का नियम है, तो भविष्य महिलाओं के साथ है।'' पंचायतों की चुनी हुई महिला प्रतिनिधि गांव में आपसी मेलजोल का प्रतीक बन गई है। कुछ स्थानों पर यह देखकर काफी प्रसन्नता होती है कि पंचायती राज संस्थाओं की चुनी हुई महिला प्रतिनिधि जाति, वर्ग, पितृ प्रधानता एवं शक्ति से जुड़ी चुनौतियों के बावजूद सक्षम एवं समर्पित नेत्री के रूप में अपनी पहचान बना रही हैं। पंचायतों में महिलाओं के प्रवेश से न सिर्फ उनका निजी, सामाजिक और राजनीतिक सशक्तीकरण होगा, बल्कि राजनीति में गुणवत्तापरक एवं परिमाणात्मक सुधार भी आएगा। खुशी की बात है कि देश के 15 राज्यों ने पंचायती राज संस्थाओं में महिला आरक्षण 33 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया है। यह राजनीति में महिलाओं की सक्रियता बढ़ाने की दृष्टि से एक ठोस सकारात्मक कदम है। लेकिन निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की सिर्फ बढ़ती संख्या से महिलाओं का सशक्तीकरण नहीं होगा। महती जरूरत है कि उनके समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था हो, उनमें आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए कदम उठाए जाएँ, उनकी उच्चाकांक्षाओं एवं भागीदारी को बढ़ावा दिया जाए और उन्हें अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने के लिए अनुकूल अवसर उपलब्ध कराए जाएँ। कई महिला पंचायत प्रतिनिधि अपनी सक्रियता और ठोस कार्यों से साबित कर चुकी हैं कि वे कुशल नेतृत्व देने में पुरूषों से कहीं आगे हैं।

विकेन्द्रीकरण और समावेशी विकास के बीच गहरा संबंध है। समावेशी विकास का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को यह आभास कराना है कि उनके जेंडर, जाति, धर्म या निवास स्थान के साथ किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना वे देश में नीति निर्धारण प्रक्रिया के रूप में एक महत्वपूर्ण अंग है।

निर्णय.प्रक्रिया एवं राजनीतिक भागीदारी

पंचायती राज संस्थाओं के निर्णयों पर व्यक्ति की स्थिति का निर्णायक समिति में उनके महत्व का बड़ा असर पड़ता है। इसके अलावा कई विकल्पों में से सही विकल्प चुनने में भागीदारी की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस भागीदारी से सदस्य व्यक्ति की जानकारी और वास्तविक क्षमता में वृद्धि होती है जो अंततः निर्णयों को प्रभावित करते हैं। निर्णय लेने वाले प्रभावशाली लोगों की पहचान के लिए इस अध्ययन में तीन कारक लिए गए हैं–स्थिति संबंधी, प्रतिष्ठा संबंधी और निर्णय संबंधी। पंचायतों में आने के बाद ग्रामवासियों के साथ महिला जनप्रतिनिधियों का संवाद और अधिक होने लगा है। ग्रामीणों से उनकी समस्याओं के बारे में चर्चा कर उनकी समझ अधिक विकसित हुई है। ग्रामवासियों को इनसे बहुत अधिक अपेक्षाएँ हैं पर वे जानती हैं कि अधिकारों के अभाव में वे ज्यादा कुछ नहीं कर सकतीं। कई अवसरों पर इन महिला प्रतिनिधियों ने ग्राम या ब्लाक स्तर पर अपनी उपेक्षा भी महसूस की है।

पंचायती राज संस्थाओं में ग्रामीण सत्ता का केन्द्र अभी तक पुरूष और तथाकथित जातियाँ ही रही हैं। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई (अब कतिपय राज्यों में 50 फीसदी) स्थान आरक्षित होने से ही महिलाओं को इनमें प्रवेश मिल सका है। अभी भी पंचायतों में पुरूषों का वर्चस्व है क्योंकि ज्यादातर सरपंच पुरूष ही हैं। पंचायत समितियों के अध्यक्ष भी ज्यादातर पुरूष ही हैं। इन संस्थाओं में महिलाओं की उपस्थिति जरूर हुई है पर इनके सर्वोच्च पद पर वे अभी नहीं पहुँच पाई हैं। जहाँ तक उनकी प्रतिष्ठा का मामला है, कई महिला प्रतिनिधियों को उनके महिला एवं पुरूष सहयोगियों ने अत्यंत प्रभावशाली ढंग से स्वीकार किया है। यह सब उनकी उम्र, शैक्षिक स्तर, संगठनों में काम करने के उनके पुराने अनुभव, संपर्क और बेहतर संवाद क्षमता के कारण संभव हो पाया है। उनकी योग्यता और प्रभाव का एक कारण राज्य विधानसभा या राजनीतिक दलों व स्थानीय पढ़े–लिखे लोगों से संपर्क और मित्रता भी है। किसी भी प्रस्ताव के आरंभ से लेकर उसकी समूची प्रक्रिया में इन महिला प्रतिनिधियों की भागीदारी और क्रियान्वयन समितियों में उनकी सदस्यता के चलते ही आज ये महिलायें निर्णायक भूमिका वाले पदों पर पहुँची हैं। निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने की उनकी क्षमता इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने प्रक्रिया, क्रियान्वयन और पुनर्संचालन में दिलचस्पी ली है।

प्रारंभ में महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता निर्बल रही थी परन्तु पिछले कई वर्षों का इतिहास देखा जाए तो ज्ञात होता है कि वर्तमान में महिलाएँ सत्ता में भी सहभागिता चाहती हैं और वे विधानसभा व संसद में एक तिहाई महिला आरक्षण की माँग कर रही हैं। इसी कारण महिला सशक्तीकरण हेतु प्रस्तावित महिला आरक्षण विधेयक वर्ष 1995, 1996, 1997, 1998, 2000, 2001, 2005, 2010 में पेश किया गया, परन्तु इसके पारित न होने का प्रमुख कारण इसके पक्ष व विपक्ष के विभिन्न पहलू हैं जो एक मत निर्मित करने में बाधक सिद्ध हो रहे हैं। पंचायत में महिलाओं को 33 प्रतिशत और फिर 50 प्रतिशत आरक्षण मिलने के बाद अब संसद में भी 33 प्रतिशत आरक्षण देने पर विचार चल रहा है। पंचायत में जिस तरह से महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने की कोशिश की जा रही है इस तरह देखें तो अगर पंचायत से यह शुरूवात न हुई होती तो यह कदम संसद तक पहुँच पायेगा, यह कहना मुमकिन नहीं था। वास्तव में विश्व स्तर पर महिलाओं की 33 प्रतिशत ससंदीय भागीदारी की अवधारणा 1995 में संयुक्त राष्ट्र संघ की बीजिंग में हुई चौथी विश्व महिला कांफ्रेस में आई। इसमें कहा गया कि प्रजातांत्रिक संस्थाओं में कम से कम 33 प्रतिशत महिला भागीदारी होनी चाहिए। केन्द्र सरकार की बात करें तो 1995 में सरकार ने 30 फीसदी महिला उम्मीदवार की प्रतिबद्धता का बिल पेश किया था, लेकिन इसका काफी सदस्यों द्वारा विरोध किया गया, इसके बाद 12 सितम्बर, 1996 को लोकसभा भंग होने के कारण यह बिल अधर में लटक गया। इसके बाद 26 जून, 1998 को तत्कालीन अटल विहारी बाजपेयी सरकार ने महिला आरक्षण विधेयक पेश किया। मई, 2003 में राजग सरकार ने भी इस विधेयक को संसद में लाने की कोशिश की लेकिन नाकाम रही। उसके बाद यूपीए सरकार में प्रधानमंत्री डॉ0 मनमोहन सिंह ने 6 मई, 2008 को 108वाँ संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा के बजाय राज्यसभा में पेश किया। तत्कालीन राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने 4 जून, 2009 को 15वीं लोकसभा के अभिभाषण में सरकार की सौ दिनों की प्राथमिकताओं में संसद और राज्य विधान सभाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिये जाने की बात कही।[31]

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

इसके अलावा देश के अन्दर कई राज्यों में किये गये एक अध्ययन से न केवल पता चलता है कि कैसे आरक्षण स्थानीय राजनीतिक मानचित्र पर महिलाओं के प्रवेश के लिए एक महत्वपूर्ण शुरूवात साबित हुआ है। बल्कि यह भी हमें याद दिलाता है कि प्रक्रिया अभी शुरू हुई है और पूरी तरह से विकसित होने में समय लगेगा। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी के लिए अनुकूल स्थितियाँ और खुले रास्ते बनाने के लिए हमें सामाजिक दृष्टिकोण और नागरिक समाज की मानसिकता में बदलाव की जरूरत है, स्थानीय प्रशासन को भी लिंग भेद के प्रति अधिक संवदेनशील होने की जरूरत है।

राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार महत्वपूर्ण हैं क्योंकि कई मामलों में महिलाओं को समझ में नहीं आता है कि उनको वशीभूत किया जा रहा है या उन पर अत्याचार किया जा रहा है और वह स्थिति में बदलाव नहीं लाना चाहती है। यदि महिलाएँ अपने राजनीतिक अधिकारों सहित अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और सजग हैं तो भी उन्हें चुनाव के लिए अकेले खड़े होने और वोट करने के अपने अधिकार का प्रयोग करने के लिए अनुनय और लामवंदी के एक और दौर की जरूरत है। इस प्रकार महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का मुद्दा अलगाव के रूप में नहीं देखा जा सकता। हम शिक्षा, सामाजिक जागरूकता, आर्थिक शक्ति और राजनीतिक भागीदारी के मुद्दे को निर्विवाद हिस्सों में विभाजित नहीं कर सकते हैं। यह सभी मुद्दे एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। महिलायें जहाँ साक्षरता दर अधिक है और उनकी सामाजिक स्थिति बेहतर है वहाँ नये कदमों का बेहतर लाभ ले सकती हैं। स्वास्थ्य, साक्षरता और अन्य आवश्यकताएँ उनके बुनियादी अधिकार हैं और उन्हें उनकी आर्थिक स्थिति को बदलकर सामाजिक स्तर में अपनी स्थिति में सुधार करने का मौका दें। राजनीतिक शक्ति का दावा करने में एक लंबा रास्ता तय करना होगा।

पंचायतों में महिला प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाये जाने के संदर्भ में एक व्यवस्थित कार्यक्रम के रूप में भारत सरकार के पंचायती राज मंत्रालय द्वारा 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007–12) के दौरान एक पंचायत महिला एवं युवा शक्ति अभियान (पीएमईवाईएसए) नामक एक नई योजना की शुरूवात की गयी है जिसका उद्देश्य निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को एक नेटवर्क में गूंथना और समूह क्रिया के माध्यम से उनको सशक्त बनाना है ताकि स्थानीय प्रशासन के मुद्दों पर उनकी भागीदारी और प्रतिनिधित्व दोनों में सुधार हो। पंचायत महिला एवं युवा शक्ति अभियान का उद्देश्य है, निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में आत्मविश्वास और क्षमता निर्माण करने के लिए एक निरन्तर अभियान ताकि वे ग्रामीण स्थानीय स्वशासन सरकारों में सक्रिय भागीदारी से उन्हें रोकने वाली संस्थागत, सामाजिक और राजनीतिक बाधाओं को पार कर सकें। पंचायत महिला एवं युवा शक्ति अभियान एक केन्द्रीय परियोजना है जिसके तहत विभिन्न गतिविधियों के आयोजन के लिए पूरी राशि भारत सरकार के पंचायती राज मंत्रालय द्वारा वित्त पोषित की जाती है। इस अभियान के तहत निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में एक जुटता बनाने, राज्य और केन्द्र सरकार में उनकी माँगों को पेश करने के लिए निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को अवसर देने, सार्वजनिक बैठकों में भाग लेते समय निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में शर्म व हिचकिचाहट पर काबू पाने की कुशलता दिखाने तथा प्रशिक्षण के माध्यम से निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में क्षमता निर्माण इस अभियान का प्रमुख उद्देश्य है। किन्तु इस योजना में भी स्थानीय स्तर पर कार्यक्रमों का राजनीतिकरण और राज्य सरकारों तथा संयोजक कोर कमेटी के बीच समन्वय की कमी प्रमुख रूप से शामिल है, जिस पर अभी भी बहुत कुछ करना शामिल है।[32]

पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की सफलता प्रतिक्रिया, निराशा, सीमित सत्ता हस्तांतरण की बाधाएँ, सीमित संसाधन, सांस्कृतिक पूर्वधारणाएँ आदि चुनौतियों की मात्रा व गुणवत्ता विशिष्ट सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य द्वारा निर्धारित होती हैं। साथ ही प्रत्येक राज्य में इन संस्थाओं की प्रकृति, प्रभावी सत्ता हस्तांतरण की सीमा, वित्तीय एवं मानवीय संसाधनों की उपलब्धता भी ग्रामीण महिलाओं की इन संस्थाओं में योग्यता व उपयोगिता में अंतर पैदा करते हैं। इसी कारण महिलाएँ इन चुनौतियों का सामना करने के लिए समर्थकारी व्यवस्था की माँग करती हैं। अपने परिवारों के समर्थन, अभिप्रेरणा एवं सहयोग आदि में कमी भी महिलाओं को हतोत्साहित करते हैं। अधिकतर महिलायें सामाजिक मान्यताएँ, जनता से मेल–मिलाप पर प्रतिबंध, असुरक्षित एवं हिंसक वातावरण के कारण इन संस्थाओं की ओर आकर्षित नहीं हो पातीं।

महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण हेतु प्रमुख सुझाव

ग्रामीण महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए महिलाओं एवं पंचायती राज के सम्मुख उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए दीर्घकालीन रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। उन्हें व्यवस्थित होकर विभिन्न बाधाओं एवं चुनौतियों को दूर करना पड़ेगा। इस हेतु कुछ प्रमुख सुझाव निम्न हैं :–

- महिला प्रतिनिधियों को एकत्रित होकर इन संस्थाओं में काम करना चाहिए। इन्हें महिलाओं के सम्बन्धित मुद्दों पर मतभेद भुलाकर काम करना होगा। इन्हें लैंगिक भेदभाव, कन्या भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा एवं बाल अधिकारों से सम्बन्धित मुद्दों पर एकजुटता का प्रदर्शन करना चाहिए।
- निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं एवं पुरूषों की संतुलित भागीदारी के लिए आम राय बनाने हेतु जन अभियान चलाया जाना चाहिए। महिलाओं को विश्व के अन्य देशों, जैसे–कनाडा, जर्मनी, नाईजीरिया एवं फिलीपीन्स की तरह स्वयं के दल बनाने चाहिए। इनका उद्देश्य विभिन्न स्तरों पर महिलाओं की सहभागिता को बढ़ावा देना होना चाहिए।
- महिलाओं को संगठित होकर विभिन्न स्तरों पर अपने नेटवर्क स्थापित करना चाहिए, ताकि निर्णय निर्माण एवं क्रियान्वयन में अपने प्रभाव का इस्तेमाल कर सकें। महिला ग्राम पंचायतों की नेटवर्किंग ही उनके सामूहिक ताकत, एकजुटता की भावना और एक दूसरे से अनुभव सीखने का रास्ता खोलेंगे।
- महिलाओं के लिए शैक्षणिक सुविधाओं के विस्तार, राजनीति में सक्रियता, अधिकारों के लिए विधान मंडलों एवं वैधानिक निकायों में सक्रियता, समानता के अवसरों को पाने की इच्छा एवं सामाजिक परिवर्तन की अति आवश्यकता है। इन सभी समन्वित प्रयासों से ही महिलाओं का पंचायतों में राजनीतिक सशक्तीकरण संभव हो सकेगा।
- पंचायती राज में महिलाओं की प्रभावी सहभागिता विशिष्ट कुशलता, ज्ञान एवं दृष्टिकोण की माँग करती है। इसलिए व्यवस्थित प्रशिक्षण एवं अभिनवीकरण की आवश्यकता है, ताकि महिलाएँ वर्तमान स्थितियों को बदलकर संसाधनों एवं सत्ता के प्रयोग द्वारा महिला राजनीतिक सहभागिता को शीघ्रता से संभव बना सकें।
- राजनीतिक दलों को भी महिला सहभागिता को बढ़ावा देना चाहिए। अपने संगठनों में उन्हें महिलाओं को अधिक से अधिक स्थान देना चाहिए।
- धन एवं शक्ति (Money and Power) पर निर्भर निर्वाचन प्रणाली को भी बदला जाना चाहिए। चुनावों में जातिवाद, अपराधीकरण, मतदान केन्द्रों पर कब्जा (Booth Captchering) जैसी बुराइयों को दूर करना चाहिए।
- केवल महिला आरक्षण ही महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण को संभव नहीं बना सकता। महिला प्रतिनिधि शिक्षा, सूचना एवं ज्ञान के माध्यम से ही अपने कार्यों एवं दायित्वों को संभाल सकती है। इस संदर्भ में मीडिया भी अहम भूमिका निभा सकती है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

- सरकारी कार्यों में पारदर्शिता, प्रभावी चुनावी व्यवस्था, संवेदनशील एवं उत्तरदायी जनता आदि मिलकर महिलाओं की राजनीतिक गतिशीलता एवं सहभागिता को बढ़ावा दे सकते हैं।
- महिला सहभागिता अभियान को प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों के एक प्रमुख भाग के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों में अपनाया जाना चाहिए। विभिन्न गैर–सरकारी संगठन पंचायती राज में महिला सहभागिता के लिए समुदायों को शिक्षित एवं गतिशील कर सकते हैं।
- महिलाओं को स्वयं संगठित होने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। महिला संगठन सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने में अहम भूमिका अदा कर सकते हैं। सरकार द्वारा इस तरह के महिला संगठनों के वित्तीय सहायता एवं ढाँचागत सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।
- मीडिया ग्रामीण समाज में बदलाव जाने में प्रमुख भूमिका निभा सकता है। उसके द्वारा जेंडर समानता और जेंडर न्याय की खबरें एवं विश्लेषण देकर ग्रामीण समाज में जागरूकता का प्रयास किया जाना चाहिए।
- प्राथमिक, सेकंडरी और हायर सेकंडरी के छात्रों में जेंडर संवेदनशील पैदा करने के लिए पाठ्यक्रम में यथोचित संशोधन किया जाना चाहिए।
- देश के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महिला सदस्यों ने पंचायती राज संस्थाओं में सक्रिय भूमिका निभाते हुए शिक्षा, स्वास्थ्य एवं विकास कार्यों को बखूबी अंजाम दिया है। इस तरह की महिलाओं के सराहनीय नेतृत्व का प्रसार किया जाए और उन्हें सार्वजनिक रूप से सम्मानित किया जाए। इससे अन्य महिलाओं को प्रेरणा मिलेगी।
- पंचायत के सभी स्तरों पर महिलाओं की भागीदारी पर जोर दिया जाए। इससे उनमें न सिर्फ आत्मविश्वास जागृत होगा, बल्कि नेतृत्व क्षमता में भी निखार आएगा। ग्राम पंचायत से लेकर जिला पंचायत तक में महिला सदस्यों की न्यूनतम उपस्थिति अनिवार्य की जानी चाहिए।
- ग्रामीण इलाकों में प्रबुद्ध और निरक्षर महिलाओं के बीच संवाद को बढ़ावा दिया जाए। निरक्षर या कम पढ़ी–लिखी महिलाओं को शहरी इलाकों में ले जाकर वहाँ की शिक्षित महिलाओं के साथ संवाद की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- महिलाओं के प्रति पुरूषों एवं स्वयं महिलाओं की धारणा में बदलाव लाना जरूरी है। महिलाओं का काम सिर्फ घर की देखभाल एवं संतान पैदा करना नहीं, बल्कि सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक क्षेत्र में पुरूष एवं महिला समान रूप से साझेदार होते हैं। इसके लिए शिक्षा के जरिए पुरुष एवं महिला दोनों में जागरूकता का प्रसार किया जाना चाहिए।
- ग्रामीण महिला राजनीतिक सहभागिता हेतु उपर्युक्त सारे प्रयास एवं सुझाव तभी उपयोगी होंगे जब राजनीतिक उपायों से समुदायों के मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन किया जायेगा। ग्रामीण समुदायों के दिमाग में यह बात बिठाने की आवश्यकता है कि महिलाएँ ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान कर सकती हैं। इस हेतु स्वयं महिलाओं एवं अन्य कट्टर पंथियों के मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन की तत्काल आवश्यकता है।
- महिला नेतृत्व विकास हेतु आवश्यक है कि वह स्वयं उन नीतियों व योजनाओं के निर्माण में सहभागी हों जो उनके लिए बनायी जा रही हैं। यह तभी संभव हो सकता है जब वे स्वयं भी उस राजनीतिक व्यवस्था का अंग हों जो नीति–निर्माण व क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार हैं। इसके लिए आवश्यक है कि 9 मार्च, 2010 को राज्य सभा द्वारा पारित महिला आरक्षण विधेयक को लोकसभा से भी पारित करवाया जाए।
- महिला नेतृत्व विकास के लिए चलाई जा रही योजनाओं तथा कार्यक्रमों का मूल्यांकन तथा अनुश्रवण नियमित अंतराल पर किया जाना चाहिए। कोई भी योजना तभी सार्थक हो सकती है जब उसे वास्तविक धरातल पर लाया जाए और इसके लिए मूल्यांकन और अनुश्रवण की आवश्यकता है, जिसकी हमारे देश में शायद सर्वाधिक कमी है।
- महिला नेतृत्व विकास के लिए सर्वाधिक आवश्यक है कि पंचायतों का सशक्तीकरण हो, क्योंकि कमजोर पंचायतें महिलाओं को सशक्त नहीं कर सकतीं। इसलिए पंचायतों की स्थिति को मजबूत करना आवश्यक है। अधिकतर पंचायतों के पास अपना कोई विशेष राजस्व नहीं है। न्याय प्रशासन एवं पुलिस प्रशासन के विकेन्द्रीकरण का भी अभाव है। इसलिए हमें पंचायती राज को विकास के वाहक के रूप में देखने के बजाय विकास को ही पंचायत राज के वाहक के रूप में देखना चाहिए, तभी वास्तविक महिला सशक्तीकरण संभव हो सकेगा तथा पंचायती राज व्यवस्था में महिला नेतृत्व का विकास संभव हो सकेगा।

निष्कर्ष

देश के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण महिला नेतृत्व विकास अति आवश्यक हैं और इसी कारण देश के विकास के लिए ग्रामीण महिलाओं को मुख्य धारा में लाना सरकार की मुख्य चिंता रही है। ग्रामीण महिला नेतृत्व विकास ग्रामीण भारत के विकास के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण, जीवन के सभी क्षेत्रों में सतत् विकास, पारदर्शी तथा उत्तरदायी सरकार एवं प्रशासन के लिए आवश्यक है। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं एवं पुरूषों की समान भागीदारी ग्रामीण समाज एवं देश के संतुलित विकास को बढ़ावा देगी जिससे अंततः भारतीय लोकतंत्र को मजबूती मिलेगी, क्योंकि ग्रामीण महिलाओं की सभी स्तरों पर निर्णय एवं नीति–निर्माण तथा क्रियान्वयन में सक्रिय सहभागिता के बिना समानता, सामाजिक न्याय एवं लोकतांत्रिक आदर्शों की प्राप्ति नहीं होगी। अभी महिला नेतृत्व विकास के लिए बहुत रास्ते पार करने हैं, बहुत से कदम उठाने बाकी हैं, इसलिए लचीली एवं प्रभावी रणनीतियों को अपनाने की आवश्यकता है।

कानून संरचनात्मक असमानता को दूर नहीं कर सकते हैं लेकिन वे निश्चित रूप से सामाजिक परिवर्तन में सहायता कर सकते हैं। हमें समतामूलक और न्यायसंगत समाज को प्राप्त करने के लिए अहिंसा और गैर पूर्वाग्रह की संस्कृति पर जागरूकता लाने की जरूरत है। हमें प्रणालीगत सुधार करने की जरूरत है न कि व्यक्तिगत मामलों से अपनी सफलता को सीमित करने की। राजनीतिक भागीदारी न केवल महिलाओं के विकास और सशक्तीकरण का प्रतीक है, बल्कि यह आगे भी जागरूकता पैदा करती है और बड़े पैमाने पर उनके और सामाजिक हितों को बढ़ावा देने के लिए राजनीतिक क्षेत्र का एक हिस्सा होने के लिए अन्य महिलाओं को प्रोत्साहित करती हैं। महिलाओं को न केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेना चाहिए बल्कि सही अर्थों में सशक्तीकरण कहलाने के लिए विचार–विमर्श के परिणाम को प्रभावित करने में सक्षम होना चाहिए।

इस प्रकार पंचायती राज ने मौन क्रांति के रूप में ग्रामीण महिला सशक्तीकरण को विभिन्न तरीकों से बढ़ावा दिया है। इसने अब पुरूष मानसिकता को भी बदल दिया है। वे महिलाओं को पंचायती राज में हिस्सा लेने के लिए कई तरीकों से बढ़ावा दे रहे हैं। समय के साथ महिलाएँ राजनीतिक कौशल प्राप्त कर लेंगी, नियम एवं प्रक्रियाओं को बेहतर तरीके से जान लेंगी और स्वयं के एजेंडे के अनुसार कार्य कर सकेंगी। इन सबके

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

होने से ग्रामीण महिलायें सद्भाव एवं सहयोग पर आधारित बेहतर ग्रामीण समुदायों का निर्माण कर पायेंगी जिनसे लिंग संतुलन एवं सामाजिक न्याय की स्थापना हो सकेगी। इस प्रकार पंचायती राज से ग्रामीण महिला नेतृत्व विकास एवं सहभागिता भविष्य में अधिक सक्षम एवं विश्वसनीय हो सकेगा। राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण नीति, 2001 में महिलाओं के साथ भेदभाव को दूर करने के लिए तीन नीतिगत दृष्टिकोण अपनाये जाने की बात कही गयी है। जरूरी है कि विधिक प्रणाली और अधिक उत्तरदायी और महिलाओं की आवश्यकता के प्रति अधिक संवेदनशील हो। इसके साथ ही विशेष प्रयासों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से और सशक्त बनाया जाना चाहिए। आँकड़े बताते हैं कि भारत में पुरूषों के मुकाबले महिलाओं की स्थिति चिंतनीय है। अतः सच्चाई को ढँकने से काम नहीं चलेगा। प्रतीकवाद और बहानों का सहारा लिये बिना हमें आगे आकर समस्या का समाधान करना होगा। परन्तु केवल सरकारी हस्तक्षेप से काम नहीं बनेगा। बेहतर परिणाम तभी प्राप्त होंगे जब दृढ़ प्रतिज्ञ महिलायें स्वयं अपने आपको सशक्त बनाने का प्रयास करेंगी और इसमें उन्हें समाज के प्रबुद्ध वर्ग का प्रोत्साहन मिलेगा।

महिला नेतृत्व विकास एक ऐसा महत्वपूर्ण सामाजिक घटक हैं जिसको समझने के लिए हमें अपने पारिवारिक ढाँचे सहित उसके अहुआयामी प्रभाव पर मनन करना होगा। जनगणना 2011 से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह निकलता है कि देश में स्त्री और पुरुष का अनुपात संतुलित नहीं है। इससे भी अधिक चिंता की बात यह है कि 0–6 वर्ष की आयु तक के बच्चों में भी लिंगानुपात लड़कों के पक्ष में झुका हुआ है, लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की संख्या कम है। संतुलित जनसंख्या के लिए काम करना एक बड़ी चुनौती है। यदि पंचायतों में मौजूदा पूर्वाग्रहों पर विजय पाना है तो महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करनी होगी। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल विकास, ऋण सुविधायें और निर्णय लेने के अवसर के साथ–साथ कानूनी अधिकार भी प्रदान करने होंगे ताकि वे सही अर्थों में सशक्त और समर्थ बन सकें। जेंडर इक्वालिटी अर्थात स्त्री–पुरूष समानता का सिद्धान्त हमारे संविधान में ही दिया हुआ है, जिसमें महिलाओं की समानता की गारंटी निहित है। इससे वर्षों से सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक भेदभाव झेल रही महिलाओं की समस्याओं को दूर कर उनके पक्ष में सार्थक वातावरण तैयार करने का अवसर हमें मिलता है। लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत हमारे कानून, विकास सम्बन्धी नीतियों, योजनाओं तथा कार्यक्रमों में महिलाओं की उन्नति हमारा प्रमुख लक्ष्य रहा है। सरकार के ऐसे अनेक कार्यक्रम हैं जिनमें महिला संवेदी कल्याण कार्यक्रम, सहायक सेवाएँ और जागरूकता फैलाने पर जोर दिया गया है। ये कार्यक्रम स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि और ग्रामीण विकास क्षेत्रों के कार्यक्रमों के पूरक के तौर पर काम करते हैं। इस सभी कार्यक्रमों का उद्देश्य महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से सशक्त बनाना है ताकि वे राष्ट्रीय विकास के प्रयासों में पुरूषों के समान और सक्रिय भूमिका अदा कर सकें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. कश्यप, सुभाष, ''भारत का सांविधानिक विकास और भारत का संविधान'' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1997, पृष्ठ–229
2. सुनील गोयल, ''भारतीय समाज में नारी'', आर.बी.एम.ए. पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पेज 26–31
3. वृंदा करात, ''भारतीय नारी : संघर्ष और मुक्ति'', नाईस प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली, 2008, पेज 81–91
4. राधा कुमार, ''स्त्री संघर्ष का इतिहास'' (1800–1900), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पेज 136–151,
5. ललित कुमावत, ''पंचायती राज एवं वंचित महिला समूह का उभरता नेतृत्व'', क्लासिकल पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 2004, पेज 102–121
6. हरिजन, जनवरी 18, 1988
7. Quoted in Elphinstone's History of India, London, John Murray, 1905, page- 68
8. अवस्थी, अमेरश्वर व अवस्थी, आनंद प्रकाश, ''भारतीय प्रशासन'' लक्ष्मी नारायन अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 1999–2000, पृष्ठ–496
9. शर्मा, बी.एन., शर्मा, ब्रजभूषण एवं भद्र, आशीष, ''जिला सरकार : अवधारणा, स्वरूप एवं संभावनाएं'', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2000, पृष्ठ–121
10. कोठारी, रजनी ''भारत में राजनीति'' ऑरियन्ट लॉगमैन लि0, नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ–95–96
11. नारंग, ए.एस. ''भारतीय शासन एवं राजनीति,'' गीतांजलि पब्लिकेशन्स हाउस, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ–198
12. उपर्युक्त, पृष्ठ–201
13. नेहरू, पं0 जवाहर लाल, ''सामुदायिक विकास और पंचायती राज'', सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1965, पृष्ठ–104
14. Day, S.K., "Panchayati Raj : A Synthesis" Asia Publishing House, London, 1961, page-99
15. Ibid, page-105-106
16. वसु, डॉ. दुर्गादास, ''भारत का संविधान –एक परिचय'', लेक्सिस नेक्सिस बटरवर्ड्स बाधवा नागपुर, कनाट प्लेस, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ–283–285
17. पं0 जवाहर लाल नेहरू द्वारा सामुदायिक विकास और पंचायती राज की वार्षिक कांफ्रेंस में दिये गये भाषण के अंश, नई दिल्ली, अगस्त 3, 1962
18. सर्वपल्ली, डॉ0 राधाकृष्णन, ''स्वतन्त्रता और संस्कृति'', सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1989, पृष्ठ–78
19. शर्मा, ब्रज किशोर, ''भारत का संविधान–एक परिचय'', पी.एच. आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ–279
20. गौतम, डॉ. नीरज कुमार, ''पंचायती राज एवं सूचना प्रौद्योगिकी'', कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली, वर्ष–60, अंक–03, जनवरी–2014, पृष्ठ–24–25
21. Akhtar, S.M., "National Integration" (Auditor C.P. Barthawal), " National Integration in India since Independence", New Royal Book Company, Lucknow, 2001, Page-13
22. जगजीवन राम ''भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या'', राजपाल एंड सन्स, नई दिल्ली, 1981, पृष्ठ–76
23. कर्बे इरावती, ''हिन्दू समाज और जाति व्यवस्था'', ऑरियन्ट लॉगमैन लिमिटेड, नई दिल्ली, 1975, पृष्ठ–16

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

24. Kothari, Rajni, “Politics in India”, Orient Longman limited, New Delhi, 1990, page-137
25. Y. Arjun, “Leadership in Panchayati Raj”, Panchsheel Prakashan, Jaipur, 1979, Page-23
26. सरला माहेश्वरी, ''नारी प्रश्न'', राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा0लि0, नई दिल्ली, 1998, पेज 138—151
27. चेतन मेहता, ''महिला एवं कानून'', आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1996, पेज 88—91
28. आशा कौशिक, ''नारी सशक्तीकरणः विमर्श एवं यथार्थ'', आविष्कार पब्लिशिंग, जयपुर, 2004, पेज 137—162
29. हरिमोहन धवन, ''महिला सशक्तीकरण : विविध आयाम'', रावत पब्लिकेशन, आगरा, 1998, पेज 137—162
30. जगदीश चन्द्र जैन, ''नारी के विविध रूप'', ओरियंट पब्लिकेशन, वाराणसी, 1978, पेज 137—158
31- सुधार रानी श्रीवास्तव, ''भारत में महिलाओं की वैधानिक स्थिति'', कॉमन वेल्थ पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999, पेज 52—62
32- डॉ0 किशन यादव, ''पंचायती राज में महिलाओं की स्थिति : एक राजनैतिक अयध्यन'', शब्द—ब्रह्म, पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल, Vol.4, Issue 11, सितम्बर, 2016, पेज 5—9 (Available at www.shabdbrahm.com)

© RRIJM 2015, All Rights Reserved